गुटखा पर प्रतिबंध

तेलंगाना ने तंबाकू और निकोटीन युक्त गुटखा व पान मसाला पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने का जो फैसला किया है, वह सुखद है। ऐसे गुटखों या पान मसालों के निर्माण, भंडारण, वितरण, परिवहन और बिक्री पर पूर्ण प्रतिबंध लग गया है। हालांकि, अभी यह पाबंदी एक वर्ष के लिए है, शायद आगे इसकी समीक्षा होगी और उसके बाद राज्य सरकार स्थायी प्रतिबंध का फैसला करेगी। ताजा फैसले के मुताबिक, तेलंगाना में जो कंपनियां गुटखों या पान मसालों का उत्पादन करती हैं, वे एक साल किसी अन्य उत्पाद के निर्माण का काम करेंगी। ध्यान रहे, गुटखा लॉबी देश भर में बहुत मजबूत है और इससे सरकारों व उनमें शामिल लोगों को गलत ढंग से भारी कमाई होती है, इसलिए समय-समय पर ऐसे उत्पादों पर लगने वाले प्रतिबंध धरातल पर ज्यादा टिकते नहीं हैं। तेलंगाना में ही गुटखा निर्माण के पूरे ढांचे को उखाड़ फेंकना चाहिए था, पर ऐसा होना अभी दूर की कौड़ी है।

भारत में गुटखा सहित धुआं रहित तंबाकू का उपयोग एक खतरनाक कुचलन है, जिससे गंभीर किस्म की बीमारियां होती हैं। विशेष रूप से गुटखा से कैंसर का खतरा होता है और इसी वजह से साल 2002 से ही गुटखा पर नियंत्रण के प्रयास चलते रहे हैं। साल 2012 से भारतीय राज्यों द्वारा प्रतिबंधित होने के बावजूद गुटखा व्यापक रूप से उपयोग में है। सबसे पहला राज्य मध्य प्रदेश है, जिसने गुटखा पर प्रतिबंध लगाया था, पर क्या वहां सफलता मिली? अनेक कंपनियों ने चालाकी बरती है, बिना तंबाकू वाला पान मसाला बिकता है और उसके साथ में तंबाकू का एक पैकेट अलग से मुफ्त दिया जाता है। प्रतिबंध लगने के बावजूद व्यापारियों ने बचने के रास्ते निकाल लिए हैं। बिहार, गुजरात जैसे राज्य, जहां कहने को तो शराब प्रतिबंधित है, पर क्या वहां शराब का मिलना बंद हो गया है? ठीक इसी तरह से गुटखा के साथ हुआ है। लगातार चेतावनियों व विज्ञापनों के बावजूद गुटखा या तंबाकू का सेवन घट नहीं रहा है। इस दुर्व्यसन के आदी लोग सुधरने को तैयार नहीं हैं। ऐसे में, तेलंगाना में लगा प्रतिबंध कितना कारगर होगा, यह देखने वाली बात है। दरअसल, किसी भी प्रतिबंध का तभी लाभ है, जब सभी मिलकर प्रतिबंध की पालना करें। तेलंगाना अगर अपनी सीमा में प्रतिबंध को कड़ाई से लागू करे, तो उसके पड़ोसी राज्यों तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र को भी सहयोग के लिए खड़ा होना पड़ेगा। देखा गया है कि किसी एक राज्य की भलमनसाहत को पड़ोसी राज्य प्रायः साकार नहीं होने देते।

तेलंगाना ने नए सिरे से गुटखा और पान मसालों पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया है, पर क्या उसकी मंशा कागज से निकलकर धरातल पर उतर पाएगी?

गुटखों और पान मसालों से जुड़ी समस्याओं को अभी भी हम गंभीरता से नहीं ले रहे हैं। भारत में जनसंख्या-आधारित कैंसर रजिस्ट्री में पाया गया कि 55 प्रतिशत कैंसर तंबाकू के उपयोग से संबंधित थे। विगत वर्षों में तंबाकू नियंत्रण कार्यक्रमों की आवश्यकता पर बल दिया गया, पर अच्छे परिणामों का अभी इंतजार है। लगे हाथ तंबाकू के दुष्परिणामों पर एक बार गौर कर लीजिए। भारत तंबाकू उत्पादों का दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक है। भारत में लगभग 21.4 प्रतिशत वयस्क धुआं रहित तंबाकू का उपयोग करते हैं, जबकि 10.7 प्रतिशत वयस्क धुआं वाले तंबाकू उत्पादों का सेवन करते हैं। भारत में तंबाकू छोड़ने की दर सबसे कम है, यहां सिर्फ 20 प्रतिशत पुरुष तंबाकू के दुर्व्यसन को छोड़ पाते हैं। वास्तव में, लोगों को नशे से दूर रहने के लिए प्रेरित करने की जरूरत है। साथ ही, ऐसे उत्पादों पर लगे प्रतिबंधों को जमीन पर उतारने की जरूरत है।

वक्त के साथ बहुत बदल गया चुनाव

विभूति नारायण राय | पूर्व आईपीएस अधिकारी

इस बार के चुनाव बड़े 'खामोश' हैं। न बहुत चिल्ल-पों और न जुलूसों की गहमागहमी। गांवों, शहरों के चायखानों पर सुबह से रात तक होने वाली गरमागरम बहसें भी नदारद हैं।

पहले आम चुनाव से लेकर आज जब अठारहवीं लोकसभा के चुनाव अपने अंतिम चरण में पहुंच चुके हैं, एक बात पूरी शिद्दत से कही जा सकती है कि शुरुआत से ही चुनाव-प्रक्रिया उत्सवधर्मी भारतीय समाज के लिए किसी मेले-ठेले सी रही है। शून्य से नीचे वाली बर्फानी पहाड़ियों से लेकर पचास डिग्री सेल्सियस तापमान वाले रेगिस्तानी इलाकों में रहने वाले मतदाता ने अपने जीवन की तमाम गतिविधियों की तरह मतदान को भी नृत्य, संगीत, उल्लास, उत्साह, प्रेम या घृणा से जोड़ रखा है।

समय के साथ इतना फर्क जरूर आया है कि व्यस्तताओं और मनोरंजन के दूसरे विकल्पों के चलते, अब जैसे-जैसे सार्वजनिक स्थलों पर गंभीर प्रदर्शन कलाओं की प्रासंगिकता कम होती जा रही है, उसी अनुपात में चुनावी प्रचार सभाओं में भी अपवाद स्वरूप ही श्रोताओं को बांधे रखने की जिम्मेदारी नुक्कड़ नाटकों या लोक गायकों को मिल रही है, उनके मनोरंजन के मुख्य स्रोत विपक्षियों पर किए जाने वाले कटाक्ष या अपने प्रिय वक्ता की वक्तृता ही रह गए हैं। जिस तरह मनोरंजन माध्यम शिष्ट नागर के मुकाबले 'सड़क छाप' जैसी संज्ञा के करीब आते जा रहे हैं, उसी तरह यह वक्तृता भी उत्तरोत्तर गिरावट की तरफ है। शायद इस बार भाषणों का स्तर कुछ ज्यादा ही गिरा और इसमें सत्ता और विपक्ष, दोनों ने अपना हिस्सा डाला।

इस बार के चुनाव बड़े 'खामोश' हैं, न बहुत चिल्ल-पों और न ही छोटे-बड़े जुलूसों की गहमागहमी। गांवों, कस्बों या शहरों के चायखानों पर सुबह से देर रात तक होने वाली गरमागरम बहसें भी इस बार नदारद हैं। पोस्टरों और दीवार-लेखन से पटी गलियां वीरान सी लग रही हैं। नतीजतन, पश्चिम बंगाल जैसे अपवाद छोड़ दें, तो उत्तेजना से उपजने वाले तनाव और हिंसा भी गायब हैं। शुरुआती चरणों में होने वाले कम मतदान के पीछे यह भी एक कारण हो सकता है। किसी के पास इस बड़े फर्क का कोई तसल्ली-बख्श जवाब नहीं है।

चुनाव विश्लेषकों या सेफोलॉजिस्ट की एक नई पेशेवर पौध पिछले कुछ वर्षों में फली-फूली है, लेकिन वे भी इस पर अटकलें लगाने के अलावा और कुछ भी नहीं कर पा रहे हैं।

इन चुनावों में सोशल मीडिया अपने उरूज पर है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता या एआई की छौंक भी उसमें दिखने लगी है। अभी डीपफेक का अनुपात नगण्य है, पर कोई नहीं कह सकता कि अगले चुनावों तक इसका अनुपात बढ़कर यह किस हद तक पहुंच सकता है। किसी भी संपादकीय विवेक और सरकारी नियंत्रण से काफी हद तक मुक्त यह माध्यम अपनी शक्ति और सीमा, दोनों दिखा रहा है। चुनावी रण में उतरे महारथियों ने पोस्टर लगाते-फाड़ते, वॉल राइटिंग करते या लाउडस्पीकरों पर चीखते-चिल्लाते वैतनिक कार्यकर्ताओं की फौज की जगह वातानुकूलित कमरों में लैपटॉप के साथ हाईटेक योद्धाओं को तैनात कर दिया है, जो सोशल मीडिया पर मनोवैज्ञानिक युद्ध लड़ रहे हैं और करोड़ों स्मार्टफोन पर दिन-रात व्यस्त भारतीय मतदाता इस जंग के जाने-अनजाने सैनिक बने हुए हैं।

अठारहवीं लोकसभा के चुनावों को देखते हुए मुझे बरबस 1977 के चुनाव याद आ रहे हैं। देश के साथ व्यक्तिगत रूप से मेरे लिए भी ये बड़े महत्वपूर्ण थे। आपातकाल खत्म हो गया था और उसके बाद के इस पहले चुनाव में एक पुलिस अधिकारी की हैसियत से मेरी पहली ड्यूटी लगने जा रही थी और यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि पूरे देश की तरह मुझे भी खास तरह की सनसनी का एहसास हो रहा था। आपातकाल के तमाम प्रतिबंध हट गए थे और देश को कई अर्थों में दूसरी आजादी मिली थी। जैसे कोई ज्वार फटा हो और कई मौकों पर उच्छृंखलता की सीमा लांघती यह आजादी चुनावों में भी खूब दिखी। जनता आपातकाल की ज्यादतियों का सबक सिखाने सड़कों पर निकली और फलस्वरूप उत्तर प्रदेश की सारी 85 सीटें सत्ता दल हार गया।

उस चुनाव की कई स्मृतियां हैं और कई सच्चाइयां ऐसी हैं, जो मेरे मस्तिष्क में टंकी हैं। एक सच्चाई किसी बड़े आघात की तरह उद्घाटित हुई। किसी भी राजनीतिक दल के लिए चुनावी शुचिता का कोई अर्थ नहीं था। येन-केन-प्रकारेण सभी चुनाव जीतना चाहते थे और इसके लिए मतदान केंद्रों पर तरह-तरह के हथकंडे आजमाए जा रहे थे। इनमें सबसे लोकप्रिय था बूथ पर अपने विरोधियों को वोट डालने से रोककर अपने समर्थकों से गलत-सही किसी भी तरीके से अधिक से अधिक वोट डलवा लेना। इंदिरा गांधी की कांग्रेस जो कर रही थी, जय प्रकाश नारायण के चेले उससे किसी भी मामले में पीछे नहीं थे। यह देखकर भी प्रथम दृष्टया आघात लगा कि चुनाव संपन्न कराने के लिए जिम्मेदार सरकारी कर्मचारियों में कुछ अपवाद ही थे, जो जोखिम उठाकर भी निष्पक्ष चुनाव कराने की जिद पर अड़ते थे। यह स्थिति उत्तरोत्तर खराब ही होती गई और हमारी भाषा को बूथ लुटेरे या 'बूथ कैप्चरिंग' जैसे शब्द मिले। भला हो टीएन शेषन का, जिन्होंने मुख्य निर्वाचन आयुक्त के पद की गरिमा बढ़ाई और भारतीय चुनावी प्रक्रिया को बहुत हद तक विश्वसनीय बनाया, पर यह परिवर्तन सांस्थानिक न होकर व्यक्ति केंद्रित ही ज्यादा रहा। आज किसी को बताने की जरूरत नहीं रही कि केंद्रीय निर्वाचन आयोग की साख हमारे मन में बहुत भरोसा नहीं जगा पाती है।

कई मनोरंजक संस्मरणों में एक ऐसे गांव का है, जहां के भोले निवासियों ने एक चुनाव में मतदान के बाद मुझे बताया कि उन्होंने उस उम्मीदवार को इकतरफा थोक में वोट दिए हैं, जो पिछले कई दिनों से उन्हें मुरगे और शराब की दावत दे रहा था। इत्तिफाक से दस साल बाद उसी गांव के मतदाताओं से एक बार फिर मुलाकात हो गई। इस बार वे हंस-हंसकर बता रहे थे कि उस उम्मीदवार ने शराब और मुरगे पर खर्च तो पहले की ही तरह किया था, पर उन्होंने वोट उसे नहीं दिया। अब वे ज्यादा समझदार हो गए थे।

मेरी अपनी समझ है कि भारतीय समाज कभी उन अर्थों में लोकतांत्रिक नहीं रहा, जिसकी पश्चिम से आयातित एक बालिग व्यक्ति एक मत वाला लोकतंत्र अपेक्षा करता है। वर्णों और वर्गों में बुरी तरह से विभक्त यह समाज इस लोकतंत्र से तालमेल बिठाने का प्रयास करता दिखता है और इसी का परिणाम है कि कम शिक्षित भारतीय मतदाता अपने प्रौढ़ फैसलों से कई बार दुनिया भर को चकित करता रहता है। मुझे लगता है, लोग इस बार भी निराश नहीं करेंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

लापरवाही की आग से झुलसते हमारे शहरों का बुरा हाल

के के पाण्डेय | प्रोफेसर, अर्बन मैनेजमेंट, आईआईपीए

राजकोट (गुजरात) के गेमिंग जोन में लगी आग में लगभग 30 लोगों की मौत की टीस अभी कम भी नहीं हुई थी कि राजधानी दिल्ली के एक अस्पताल में लगी आग कई नवजात पर भारी पड़ गई। आंकड़े तो ये भी हैं कि पिछले दो साल में दिल्ली के 66 अस्पतालों में आग लगने की घटनाएं घट चुकी हैं। इसका अर्थ है कि जिन जगहों पर हम जीवन की उम्मीद में जा रहे हैं, वे भी हमारी जान पर भारी पड़ सकती हैं। दिल्ली का उपहार सिनेमा अग्निकांड, पुरानी दिल्ली के लाल कुआं इलाके में एक केमिकल गोदाम में लगी आग, फिल्मिस्तान अग्निकांड जैसी घटनाएं हमारी यादों में अब तक जिंदा हैं।

ऐसी आगजनी आमतौर पर तभी होती है, जब नियमों का पालन नहीं किया जाता। या तो इमारत अनधिकृत तरीके से बनाई गई होती है या फिर उसमें सुरक्षा के पर्याप्त उपाय नहीं किए जाते या फिर सुरक्षात्मक उपायों की निगरानी नहीं होने के कारण वे वक्त पर काम नहीं करते। मुश्किलें तब बढ़ जाती हैं, जब इस तरह की इमारतें घनी आबादी वाले क्षेत्रों में होती हैं। तब ऐसी आगजनी कहीं अधिक जानलेवा साबित होती है। स्पष्ट है, आगजनी के लिए काफी हद तक नियोजन और प्रबंधन की व्यवस्था में खामी उत्तरदायी है। अगर प्रबंधन की नियमित व्यवस्था हो, लाइसेंस आदि ससमय लेने के प्रयास हों, स्थानीय प्रशासन द्वारा निगरानी की उचित व्यवस्था हो, तो आगजनी की घटनाएं काफी रोकी जा सकती हैं।

आगजनी की घटनाएं अमूमन तभी होती हैं, जब नियमों का पालन नहीं होता। घनी आबादी वाले इलाकों में यह बड़ा नुकसान कर जाती है।

सवाल मानसिकता का भी है। औद्योगिक इमारतों में नियमों की अवहेलना के कारण आमतौर पर खिड़कियां नहीं बनाई जातीं, सीढ़ियों की पर्याप्त व्यवस्था नहीं होती, ज्वलनशील पदार्थों विशेषकर गैस सिलेंडरों के भंडारण को लेकर उचित सावधानी नहीं बरती जाती और निकासी के रास्ते पर्याप्त चौड़े नहीं होते। इन सब वजहों से छोटी-सी आगजनी भी जान-माल का भारी नुकसान कर जाती हैं। आगजनी कोई नई परिघटना नहीं है। शहर से लेकर गांव तक आग लगती रहती है। गरमी के मौसम में हवा के संयोग से गांवों में आगजनी की ऐसी-ऐसी घटनाएं घटती हैं कि कई घर उनमें स्वाहा हो जाते हैं, लेकिन वहां आमतौर पर इंसानी जान बचा ली जाती है।

वास्तव में, बचाव के उपाय हमें अपने तईं भी करने होंगे और प्रशासन के स्तर पर भी। इस मामले में सरकारी एजेंसियों में समन्वय बहुत आवश्यक है। पेच यह है कि योजना बनाने का दायित्व किसी अन्य एजेंसी पर होता है और उसे लागू करने का दायित्व किसी अन्य एजेंसी का। उसके प्रबंधन की जिम्मेदारी तीसरी एजेंसी संभालती है। दिल्ली में ही योजना दिल्ली विकास प्राधिकरण (डीडीए) बनाता है, जबकि बिल्डिंग लाइसेंस नगर निगम के हवाले है। फैक्टरी लाइसेंस दिल्ली प्रशासन देखता है। इन अलग-अलग एजेंसियों के बीच समन्वय बने, तो उन लोगों को राहत मिल सकती है, जो नियमों का पालन तो करना चाहते हैं, मगर इनकी जटिलताएं उनकी मंशा पर भारी पड़ जाती हैं। अब ऑनलाइन व्यवस्था की जा रही है, ताकि सभी एजेंसियां एक प्लेटफॉर्म पर आकर मामले को निपटा सकें, मगर इसके लिए भी समन्वय जरूरी है। जाहिर है, उपाय तो हैं, लेकिन उनके क्रियान्वयन के स्तर पर भारी कमी है। दिल्ली की तुलना में मुंबई, पुणे के लोग कहीं अधिक जागरूक जान पड़ते हैं, जो इन मसलों को उठाते रहते हैं। हालांकि, अभी दिल्ली के एक अस्पताल में जो आगजनी हुई है, वहां की अनियमितता को लेकर स्थानीय लोग आवाज उठाते रहे हैं। मगर जुझारू नेतृत्व का अभाव उनकी आवाज को दुखद अंत की ओर ले गया।

दिल्ली-एनसीआर की ऊंची-ऊंची इमारतों का हाल और भी बुरा है। इनमें सुरक्षा उपायों की बात तो छोड़िए, कई बार निर्माण-कार्य शुरू करने तक की अनुमति नहीं ली जाती। ज्यादातर इमारतों में सही समय पर 'कम्प्लीशन सर्टिफिकेट' नहीं लिया जाता, यानी स्थानीय प्रशासन द्वारा मंजूर प्लान के तहत निर्माण-कार्य की स्वीकृति नहीं ली जाती या खरीदारों को 'पजेशन' देने के बाद यह सर्टिफिकेट लिया जाता है। ऐसे में, उनमें अगर कोई दुर्घटना घटी, तो भुगतना आम लोगों को पड़ता है, इसलिए ऐसे मामलों में भी आम लोगों में जागरूकता कहीं अधिक जरूरी है। उनको अपने हितों की आवाज उचित मंच पर लगातार उठानी चाहिए, तभी ऐसे हादसों से वे बच सकेंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

विश्वास और ज्ञान का रिश्ता

विश्वास और ज्ञान की समस्या वास्तव में बड़ी दिलचस्प समस्या है, और कितनी असाधारण भूमिका अदा करती है यह समस्या हमारे जीवन में! हमारे कितने सारे विश्वास हैं? जो जितना अधिक सुसंस्कृत और आध्यात्मिक होता है, यदि आप मुझे इन शब्दों का प्रयोग करने दें, तो उस व्यक्ति में समझने की क्षमता उतनी ही कम होती है। बर्बर व्यक्तियों के आज के आधुनिक जगत में भी अगणित अंधविश्वास है। जो अधिक विचारशील व सजग हैं, वे शायद कम विश्वासी होंगे। कारण यह है कि विश्वास बांधता है, अलग-थलग करता है और हम देख रहे हैं, आर्थिक और राजनीतिक, दोनों स्तरों पर सारे विश्व में यही हो रहा है। तथाकथित आध्यात्मिक जगत की भी यही स्थिति है।

आप विश्वास करते हैं कि ईश्वर है और मान लीजिए, मेरा विश्वास है कि ईश्वर नहीं है या आप विश्वास करते हैं कि प्रत्येक वस्तु और व्यक्ति पर राज्य का पूर्ण नियंत्रण होना चाहिए और मैं निजी स्वामित्व और उससे संबंधित सारी बातों पर विश्वास करता हूं; आप यह विश्वास करते हैं कि उद्धारक केवल एक ही है और उसके माध्यम से ही आप अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं, मैं ऐसा विश्वास नहीं करता। इस प्रकार आप और मैं अपने-अपने विश्वासों, मतों द्वारा अपने-अपने दावे का आग्रह कर रहे हैं। फिर भी हम दोनों प्रेम, शांति, मानव-एकता, एक जीवन की चर्चा करते हैं। इस चर्चा का अर्थ ही क्या है, क्योंकि वास्तव में यह विश्वास ही तो अलगाव की प्रक्रिया है।

आप ब्राह्मण हैं, मैं नहीं हूं; आप ईसाई हैं और मैं मुसलमान या कुछ और। आप भाईचारे की बात करते हैं, मैं भी उसी भ्रातृत्व की, प्रेम और शांति की बात करता हूं, मगर वास्तविकता यह है कि हम एक-दूसरे से अलग हो गए हैं और हम अपने आप को विभाजित करते जा रहे हैं। जो व्यक्ति शांति चाहता है, एक सुखी संसार का निर्माण करना चाहता है, निस्संदेह वह किसी भी प्रकार के विश्वास व मत में उलझकर अपने को पृथक नहीं करेगा। क्या यह स्पष्ट है? हो सकता है कि यह शाब्दिक रूप से ही स्पष्ट हुआ हो, लेकिन यदि आप इसके महत्व, इसके यथार्थ व सत्य को समझ लें, तो यह अपना कार्य करना शुरू कर देगा।

जो व्यक्ति सचमुच शांति चाहता है, एक सुखी संसार का निर्माण करना चाहता है, निस्संदेह वह किसी भी प्रकार के विश्वास व मत में उलझकर अपने को दूसरों से पृथक नहीं करेगा।

शांति चाहने वाला व्यक्ति अर्थात वह व्यक्ति, जो वाकई मानव अस्तित्व की समस्त प्रक्रिया को समझना चाहता है, किसी विश्वास से बंध नहीं सकता! ...कृपया इसका विपरीत अर्थ न लें कि मैं अधार्मिक होने का उपदेश दे रहा हूं। मेरा तात्पर्य बस यह है कि जब तक विश्वास रूप में कार्य कर रही अपनी इच्छा-प्रक्रिया को हम नहीं समझ लेते, तब तक द्वंद्व बना रहेगा, दुख बना रहेगा और मनुष्य मनुष्य का विरोधी रहेगा।

जे कृष्णमूर्ति

एंटोनियो गुटेरस | संयुक्त राष्ट्र महासचिव

हमारी जलवायु त्रासद स्थिति में है और सबसे गरीब लोग इसकी कीमत चुका रहे हैं। यह घोर अन्याय है और युवा पीढ़ी के साथ विश्वासघात भी, इसलिए स्वच्छ ऊर्जा की तरफ तेजी से बढ़ने के लिए सरकारें मजबूत नीतियां अपनाएं।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 28 मई, 1949

ऐतिहासिक निर्णय

बृहस्पतिवार, २६ मई की तिथि भारतीय इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखी जाएगी, क्योंकि इस दिन विधान परिषद् के विशाल कक्ष में बैठे हुए देश के भाग्य-विधाताओं ने अल्पसंख्यक सलाहकार समिति की रिपोर्ट को स्वीकार कर अपने माथे पर से एक बहुत पुराने कलंक को धो डाला। जिन लोगों ने देश के स्वतंत्रता संग्राम का सतर्कतापूर्वक अध्ययन किया है, उन्हें सम्भवतः यह बताने की आवश्यकता नहीं कि ब्रिटिश साम्राज्यशाहियों ने देश की समन्वित शक्ति को क्षीण करने के अभिप्राय से भारत के मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन की परिपाटी चलाई थी और धारासभाओं में अल्पसंख्यकों के लिए स्थान भी सुरक्षित किये थे। इस विषैली नीति का दुष्परिणाम हमें अंततः देश के विभाजन के रूप में मिला और १५ अगस्त सन् १९४७ के आसपास भारत के विभिन्न भागों में असंख्य निरीह जनता के लहू की जो नदियां बहीं, उनमें इसी नीति की विभीषिका अट्टहास कर रही थी। जनता की प्रतिनिधि-सभा के रूप में कांग्रेस इस नीति का सदा विरोध करती रही, क्योंकि वह जानती थी कि फूट और वैमनस्य के जो बीज बोये जा रहे हैं, वे किसी न किसी दिन उग्र साम्प्रदायिकता के वृक्ष बनकर उगेंगे और देश छिन्न-भिन्न हो जायेगा। किंतु यह एक ऐसी भवितव्यता थी, जिसे देश के नेता तत्काल रोकने में असमर्थ थे। वे उस दिन की प्रतीक्षा में थे जब देश परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़कर मुक्त हो जायेगा और हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, सभी निजी अस्तित्व को भुलाकर अपने को एक ही जननी की संतान समझेंगे। हर्ष और संतोष की बात है कि विधान परिषद् ने अल्पसंख्यक सलाहकार समिति की रिपोर्ट को स्वीकार करते हुए संयुक्त निर्वाचन और धारासभाओं में परिगणित जातियों के अतिरिक्त अन्य किसी अल्पसंख्यक के लिए स्थान न सुरक्षित करने का निर्णय किया है।

अल्पसंख्यक सलाहकार समिति की रिपोर्ट पर विधान परिषद् में दो दिन तक गम्भीरतापूर्वक विचार हुआ और एक-दो व्यक्तियों को छोड़कर सभी ने एक स्वर होकर समिति की रिपोर्ट को स्वीकार करने के पक्ष में मत दिया। जिन लोगों ने इसका विरोध किया, उन्हें सरदार पटेल ने उत्तर दिया- ''जो लोग अब भी दो राष्ट्र की नीति में विश्वास करते हैं और समझते हैं कि उनकी कोई दूसरी मातृभूमि है उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे वहीं चले जायें।''

अब नए-नए तरीकों से ठगे जाते लोग

लगता है, इन दिनों ठगी के नए-नए तरीके ईजाद किए जा रहे हैं। डिजिटल अरेस्ट का उदाहरण तो सामने है ही, जिसमें जालसाज गिरफ्तारी का डर दिखाकर सामने वाले के बैंक खाते को खाली कर देते हैं। बेशक, पुलिस ऐसे मामलों से निपटने के लिए प्रयासरत है, लेकिन फिलहाल लगता यही है कि पुलिस डाल-डाल तो अपराधी पात-पात हैं। डिजिटल अरेस्ट ठगी तो ऑनलाइन माध्यम से की जाती है, ऑफलाइन भी अपराधियों ने मानो ठगी के नए पैंतरे ढूंढ़ लिए हैं, जिसका एक भुक्तभोगी मैं भी हो सकता था।

दरअसल, तीन दिन पहले अनुराग शर्मा नामक एक हट्ठा-कट्ठा नौजवान, जो पढ़ा-लिखा और सभ्य दिख रहा था, मेरे घर आया और बताया कि पड़ोस की जमीन उसकी है और अगले दिन यहां भूमि पूजन तय है। चूंकि, पानी की व्यवस्था करने के लिए उसे मोटर लाना है और वह अकेले है, इसलिए उसने मुझसे गुजारिश की कि मेरे घर का कोई सदस्य उसके साथ चले, ताकि वह मोटरसाइकिल पर उसे पीछे बिठाकर मोटर ला सके। मैंने अपने ड्राइवर को उसके साथ भेज दिया। कुछ देर बाद वह अकेले लौटकर आया और कहा कि कुछ पैसे कम पड़ गए हैं और उसके माता-पिता बस आने ही वाले हैं, इसलिए बतौर कर्ज मैं वह रकम, जो करीब 14,000 रुपये थी, उसे दे दूं। मेरे इनकार करने पर उसने अपने तथाकथित माता-पिता को फोन लगाया, ताकि मैं उस पर भरोसा कर सकूं। मेरे बार-बार इनकार के बाद वह यह कहते हुए लौट गया कि वह दूसरे से कर्ज लेकर दुकान पर जाएगा और मोटर लेकर आएगा। शक होने पर मैंने अपने घरेलू कर्मी को उस जमीन पर भेजा, लेकिन वहां तो कोई काम नहीं हो रहा था। जाहिर है, वह मुझे बेवकूफ बना रहा था, इसलिए मैंने झट अपने ड्राइवर को फोन किया। उसने बताया कि उस व्यक्ति ने उसे किसी पार्क में बैठा रखा है। मैंने उसे फौरन घर लौटने को कहा और इस तरह मैं ठगी से सुरक्षित बच गया।

इस घटना का जिक्र मैंने इसलिए किया, ताकि लोगों को यह जानकारी हो सके कि मासूम दिखने वाला शख्स भी कितना शातिर हो सकता है। बाद में पता चला कि इस तरह की ठगी इन दिनों बढ़ गई है। स्पष्ट है, अब अपराधी नए-नए तरीकों से सामने वाले को बेवकूफ बनाने और उनसे रुपये ऐंठने की कोशिश में हैं। ऐसे में, पुलिस-प्रशासन की जिम्मेदारी कहीं अधिक बढ़ जाती है। एक काम यह भी किया जा सकता है कि आम लोगों में जागरूकता फैलाने के लिए पुलिस-प्रशासन द्वारा विशेष अभियान चलाया जाए। अगर ऐसा हो सका, तो अपराधों पर लगाम लग सकती है।

एस सी गौड़, सेवानिवृत्त अधिकारी

अनुलोम-विलोम

ठगी के नए रूप

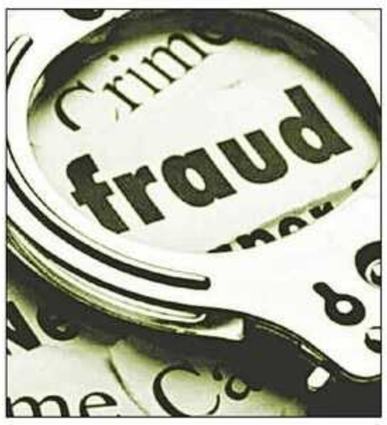

पुलिस ऐसे अपराधियों को रोकने में सक्षम

यह अपने देश की संस्कृति बन गई है कि जहां कहीं आपराधिक वारदात होती है, वहां पुलिस-प्रशासन को कठघरे में खड़ा कर दिया जाता है, मानो सारी गलती पुलिस वालों की ही हो। शायद ही कोई यह समझना चाहता है कि किस दवाब में पुलिस वाले अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हैं। सच तो यह है कि अपने देश में जितनी आबादी है और जिस हिसाब से आपराधिक घटनाएं घटती हैं, उसे रोकने के लिए पर्याप्त पुलिसबल नहीं है। फिर भी, पुलिस वाले दिन और रात का भेद मिटाकर तत्पर रहते हैं और अपराध रोकने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर देते हैं। यही कारण है कि अपराधी अपराध के नए-नए तरीके अपनाते रहते हैं। मगर पुलिस भी खुद को कहीं अधिक दक्ष बनाती रहती है और अपराधियों की गरदन तक पहुंचने में कामयाब होती रहती है।

यकीन न हो, तो दो दिन पहले की ही खबर देखिए। उत्तराखंड पुलिस ने उन तीन लोगों को धर दबोचा, जो क्राइम ब्रांच के नकली अधिकारी बनकर लोगों को डिजिटल अरेस्ट का भय दिखाकर ठगते थे। पूछताछ के दौरान उन्होंने बताया कि किस तरह वे मुंबई क्राइम ब्रांच के अधिकारी बनकर लोगों को मनी लॉन्ड्रिंग, ड्रग्स तस्करी में शामिल होने का भय दिखाकर डराते थे और फर्जी नोटिस भेजकर धोखाधड़ी करते थे। इस तरह की कार्रवाई अन्य राज्यों की पुलिस भी कर रही है और उनको सफलता भी मिल रही है। वैसे भी, अपराधी यदि अपने पैंतरे बदल रहे हैं, तो इसका एक अर्थ यह भी है कि पुलिस वाले उनके पुराने पैंतरे सफल नहीं होने दे रहे।

आम लोगों को संभवतः इस बात की भी जानकारी नहीं है कि पुलिस वाले सिर्फ अपराध रोकने के लिए तत्परता नहीं दिखाते, बल्कि लोगों को ईमानदारीपूर्वक जागरूक भी करते रहते हैं। ठगी के नए-नए तरीकों की जानकारी देते हुए पुलिस जहां-तहां पोस्टर आदि लगवाती है और आम लोगों को जागरूक करने के लिए विशेष अभियान चलाती है। असल में, दिक्कत यह है कि लोग पुलिस वाले से अधिक अपेक्षा पाल लेते हैं, इसलिए यदि उनको जरा भी मुश्किल पेश आती है, तो वे पुलिसकर्मियों को कठघरे में खड़ा करने लगते हैं। वास्तव में, पुलिस वाले भी आम इंसान ही होते हैं। उनसे भी कुछ चूक हो सकती है, लेकिन हमें पुलिस को घेरने से पहले उसके काम के चरित्र और दबाव को समझना चाहिए। वैसे भी, पुलिस-प्रशासन पर सिर्फ आरोप लगा देने से अपराध को काबू में नहीं लाया जा सकता। आम लोग और प्रशासन आपस में मिलकर ही अपराधियों पर दबिश बना सकते हैं। पुलिस तो इसके लिए तत्पर है। सवाल है कि आम लोग कितने तैयार हैं?

दिवाकर पांडेय, टिप्पणीकार

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। मंगलवार, 28 मई 2024

नीतिगत उपाय जरूरी

राजधानी दिल्ली और NCR सहित लगभग पूरा उत्तर भारत भीषण गर्मी और लू की चपेट में है। इससे तुरंत किसी तरह की राहत मिलने के भी आसार नहीं दिख रहे। मौसम विभाग ने आने वाले कुछ दिनों के लिए रेड अलर्ट जारी किया है।

चढ़ता पारा | दिल्ली-NCR के ज्यादातर हिस्सों में तापमान 45-47 डिग्री सेल्सियस के बीच बना हुआ है। दिल्ली के मुंगेशपुरी और नजफगढ़ इलाकों में तो रविवार को अधिकतम तापमान 48 डिग्री सेल्सियस से भी ऊपर पहुंच गया। इसी गर्मी में शनिवार को दिल्ली ने मतदान भी किया। वोटिंग के दौरान दिल्ली का तापमान 46.9 डिग्री सेल्सियस रहा, जो सामान्य से लगभग 7 डिग्री सेल्सियस अधिक था, जिसका असर वोटिंग पर भी दिखा।

Ai Image

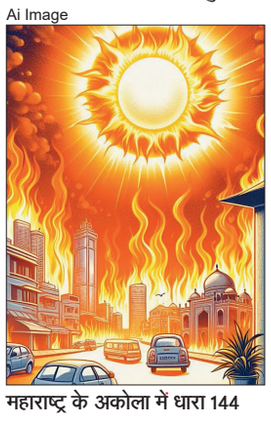

महाराष्ट्र के अकोला में धारा 144

जनजीवन पर असर | मौसम विभाग ने लोगों से अपील की है कि दोपहर के 12 बजे से तीन बजे तक घरों में ही रहें। महाराष्ट्र के अकोला शहर में तो प्रशासन ने 31 मई तक के लिए धारा 144 लागू कर दी है। यह पिछले दो दिनों से महाराष्ट्र का सबसे गर्म शहर बना हुआ है। डीएम ने जहां प्रतिष्ठानों को श्रमिकों के लिए पीने के पानी और पंखों की पर्याप्त व्यवस्था करने का आदेश दिया है, वहीं निजी कोचिंग क्लास के समय में बदलाव करने और दोपहर के समय कोई क्लास न रखने के निर्देश भी जारी किए हैं।

वैकल्पिक कदम | गर्मी से बुरी तरह प्रभावित देश के अन्य हिस्सों में भी इस तरह के कदम उठाए जाने की जरूरत है। लेकिन ऐसा करते हुए इस बात का भी ध्यान रखना जरूरी है कि ऐसे सुझाव या निर्देश आबादी के हर हिस्से के लिए उपयोगी नहीं होते। बड़ी संख्या उन लोगों की होती है, जिन्हें अपना काम खुले में ही करना होता है और वे घर बैठने का जोखिम भी नहीं उठा सकते क्योंकि परिवार के गुजारे के लिए रोज की कमाई जरूरी होती है।

कमजोर वर्गों का ख्याल | यह बात सही है कि प्रकृति भेदभाव नहीं करती। इस लिहाज से मौसम की तपिश भी सबके लिए समान है। लेकिन फिर भी इसकी मार समाज के निचले और कमजोर हिस्सों पर ज्यादा पड़ती है। जरूरी है कि उन लोगों को राहत देने के लिए जहां तक हो सके जगह-जगह पर छांव और ठंडे पानी की व्यवस्था की जाए।

गंभीर होगी समस्या | इसके अलावा जिन ऑफिसों में गर्मी से राहत की पर्याप्त व्यवस्था न हो, वहां काम के समय में बदलाव करने पर भी गंभीरता से विचार होना चाहिए। यह समस्या न तो सिर्फ इन तीन-चार दिनों की है और न ही इस सीजन की। आने वाले वर्षों में यह और गंभीर ही होती जाएगी। इसलिए नीतिगत स्तर पर भी इससे निपटने के लंबी अवधि के उपायों पर गौर करने की जरूरत है।

धूप-छांव

आटे में नमक

प्रणव प्रियदर्शी

'आटे में नमक बराबर'। कहा तो उन्होंने यही था, जब किसी ने उनका ध्यान इस तरफ खींचा कि कथनी और करनी में भेद तो सिर्फ राजनेताओं का लक्षण नहीं है। यह भेद हर तरफ दिखता है, सबके जीवन में। तो शुद्ध और सात्विक जीवन की शर्त कैसे पूरी की जाए? उनका संक्षिप्त जवाब था– आटे में बिल्कुल नमक बराबर। मतलब यह कि यह अंतर थोड़ा-बहुत रहे तो चलता है, ज्यादा नहीं होना चाहिए।

सबकी समझ में बात आ गई। रमेश (बदला हुआ नाम) टीचर थे, स्कूल में क्लास के अंदर के टीचर और घर पर ट्यूशन देने वाले टीचर के धर्म में जो टकराव था, वह उन्हें परेशान करता था। ट्यूशन टीचर सोचता कि 'अगर इन छात्रों को क्लासरूम से अतिरिक्त कुछ नहीं मिलेगा तो इनका यहां आना निरर्थक है। उनका कर्तव्य है कि इन बच्चों के यहां आने को विशिष्ट बनाएं।' क्लास रूम का टीचर कहता, 'मुझे किसी भी छात्र के साथ कोई भेदभाव नहीं करना है, सभी को अपनी पूरी क्षमता भर समझाना है।' आज मिली नई सीख ने उन्हें राहत दी। लगा कि ज्ञान देने में कोई भेद नहीं होना चाहिए, मगर नंबर देने में हो सकता है। कितना? आटे में नमक बराबर। यानी ऐसा नहीं कि ट्यूशन वाले बच्चों को टॉप ही करवाएं, बस यह देखना है कि कोई फेल न हो जाए और जहां उत्तर पूरी तरह गलत न हो, वहां थोड़ा संदेह का लाभ दे दिया जाए। बस इतना ही।

सुरेश (बदला हुआ नाम) वकील थे। कथनी में कभी स्वीकारते नहीं थे, लेकिन करनी में झूठे मुकदमे जिताते हुए बड़ा कष्ट होता था। आज दो बातें समझ में आ गईं। एक बात तो यह कि जरूरी नहीं आटे में नमक कोई एक ही आदमी मिलाए। अगर दो-तीन लोग मिलकर मिलाएं तो थोड़ा-थोड़ा नमक मिलाकर भी काम चल जाता है। केस भले एक ही हो, पर मुंशी से लेकर गवाह तक को अपने हिस्से का योगदान करने दिया जाए तो अपनी अंतरात्मा पर बोझ डाले बगैर नमक की मात्रा बढ़ने दी जा सकती है। फिर, एक और दलील आई अंदर से कि नमक कम है या ज्यादा यह कौन तय करेगा, खाने वाला ही ना? अगर वह रोटी या पूड़ी सब्जी के साथ खा रहा है तो उसकी राय अलग होगी। लेकिन अगर वही चीज उसे दही के साथ दे दी जाए तो पूरी ईमानदारी से उसकी राय बदल जाएगी।

वहां बैठे तीसरे सज्जन गणेश (बदला हुआ नाम) का काम ही लठैती का था। उनके मन में बात ज्यादा सीधे अंदाज में और ज्यादा गहराई से बैठी - आटे में नमक, बराबर। यानी जितना आटा हो उतना ही नमक होना चाहिए। नमक थोड़ा भी कम होने दिया तो बात बिगड़ जाएगी।

बोल वचन

पोटली में पसंगा

राहुल पाण्डेय

लगता है कि फारसी को संसार में सबसे ज्यादा लंगड़ी शायद हिंदुस्तानियों ने ही मारी है। बेचारी सजी-धजी हिंदुस्तान आई थी, हमने उसकी 'पूड़ी-सब्जी' बना दी। बकौल फिराक साहब, पूड़ी-सब्जी में एक शब्द संस्कृतनिष्ठ हिंदी है, और एक फारसी। ऐसे ही फारसी के पासंग को हमने लंगड़ी मारी तो अवधी, अंगिका, बघेली और बुंदेली में वह पसंगा बन गया। मगध पहुंचा तो पासंघ और मिथिला पहुंचकर पसडा बन गया। पासंग या पसंगा मतलब तराजू में संतुलन बनाने के लिए काम आने वाला छोटा सा भार। इन दिनों इलेक्ट्रॉनिक तराजू आ गए हैं। हाथ में उठाकर तौलने वाले तराजू अब सिर्फ अदालतों की निशानदेही के काम आने लगे हैं। मगर गांव-गिरांव में आज भी ऐसे तराजू देखने को मिल जाते हैं, जिनके पलड़े पर पसंगा बंधा होता है। पहले यह पसंगा आने-दो आने या बीच में छेद किए हुए पैसों से बनता था। बाद में पैसों की जगह पोटली में बंधे पत्थरों ने ले ली। पत्थरों की यह आदत है कि मौका पाते ही पैसों की जगह ले लेते हैं। जो चीज संतुलन बनाती हो, हमें उसकी इज्जत करनी चाहिए थी। मगर हमने फिर से फारसी सहित संतुलन को लंगड़ी मार दी, और पसंगा कमतरी के अर्थ में काम आने लगा। कहते हैं, 'अरे, वो तो उनके पसंगे बराबर भी नहीं हैं।' यानी फलाने किसी अलाने के सामने बहुत तुच्छ हैं। इंग्लिश में पसंगे के लिए make-weight प्रयोग किया जाता है। कम से कम इंग्लिश के ये दो शब्द पसंगे के संतुलन को ऊंच-नीच की हमारी तुच्छ आदत से तो बाहर निकालते हैं!

Subrata Dhar

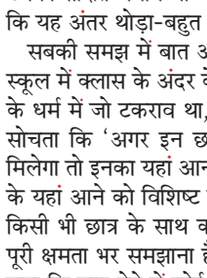

T-20 लीग मतलब शुद्ध मनोरंजन, लेकिन इसमें उठे विवाद का असर गहरा हो सकता है

क्या IPL ने टीम इंडिया में दरार डाल दी

रूपेश रंजन सिंह

कोलकाता नाइट राइडर्स की खिताबी जीत के साथ IPL का 17वां संस्करण भी समाप्त हो गया। एक बार फिर वह अपने पीछे अद्भुत ऊर्जा, कौशल और रोमांच के यादगार क्षणों के साथ-साथ कुछ विवादों की गठरी भी छोड़ गया है।

फैंस का डर | इस सीजन की चर्चा अगर KKR की खिताबी जीत को लेकर होगी, तो पांच बार की चैंपियन मुंबई इंडियंस (MI) के पतन का जिक्र भी जरूर आएगा। कोलकाता मिसाल बना कि कैसे स्टारडम कल्चर को दरकिनार कर एकजुट प्रदर्शन से खिताब हासिल किया जा सकता है। वहीं, मुंबई अंदरूनी राजनीति से बर्बाद होने वाली टीम की पहचान लिए सीजन से बाहर गई।

राजनीति की आंच | अब डर है कि MI की राजनीति की परछाई टीम इंडिया पर भी न पड़ जाए। भारतीय टीम आगामी T-20 वर्ल्ड कप में कैसा प्रदर्शन करेगी, इसे लेकर भारतीय प्रशंसक आशंकित हैं। इसकी बड़ी वजह टीम के कप्तान रोहित शर्मा और उपकप्तान हार्दिक पंड्या की जोड़ी है। इस पूरे IPL सीजन ये दो खिलाड़ी सबसे ज्यादा चर्चा में रहे।

हार्दिक का विरोध | हार्दिक का कप्तान बनकर मुंबई इंडियंस में लौटना टीम के कई सदस्यों सहित फ्रैंचाइजी के फैंस को अखर गया। हार्दिक जब-जब मैदान पर आए, उनके खिलाफ हूटिंग हुई। फैंस के इस रवैये ने कई पूर्व और मौजूदा क्रिकेटरों को हैरान किया। संजय मांजरेकर और विराट कोहली ने मैदान पर ही फैंस से सही बर्ताव करने की गुजारिश भी की।

रोहित की चुप्पी | इसी दौरान इस विवाद की एक कड़ी रहे MI के पूर्व कप्तान रोहित शर्मा ने चुप्पी साधे रखी। इसने आग में घी का काम किया। उनकी चुप्पी से यही संदेश गया कि वह भी फैसले से नाखुश हैं। इस दरार का असर टीम के प्रदर्शन पर दिखा। प्लेऑफ की रेस से बाहर होने वाली मुंबई पहली टीम बनी और पॉइंट्स टेबल में सबसे नीचे रही। दरार तो पड़ चुकी है, अब देखना है कि इसका टीम इंडिया के विश्व कप अभियान पर कितना असर पड़ता है।

विवाद पैदा किए | ध्यान खींचने के लिए विवादों को हवा देना कोई नई बात नहीं, जैसा कि इस लीग के ब्रॉडकास्टर ने किया। ब्रॉडकास्टर के कैमरे ने कभी लखनऊ के कप्तान केएल राहुल पर तल्ख होते ओनर संजीव गोयनका की लाइव तस्वीरों को दुनिया तक पहुंचाया, तो कभी रोहित शर्मा की KKR के कोच स्टाफ में शामिल अभिषेक नायर से निजी बातचीत के ऑडियो को जगजाहिर करके गॉसिप का नया विषय दिया।

ब्रॉडकास्टर पर लगाम | रोहित ने ब्रॉडकास्टर को आड़े हाथों लिया। उन्होंने बताया कि गुजारिश के बाद भी निजी बातचीत रेकॉर्ड की गई। इसके बाद व्यूअरशिप के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार बैठे ब्रॉडकास्टर की सीमा तय करने पर चर्चा जरूर हुई, लेकिन नतीजा फिलहाल सिफर ही नजर आ रहा है। हां, जोर इस सवाल पर जरूर है कि रोहित और राहुल क्या अगले सीजन में नए घर तलाशेंगे या अपनी टीमों के साथ बने रहेंगे। दोनों मामलों में फ्रैंचाइजी ओनर का फैसला अहम होगा। अगले साल होने वाले मेगा ऑक्शन से पहले दोनों खिलाड़ियों को रिटेन या रिलीज करने का निर्णय ओनर को ही लेना है।

लीग का स्कोरकार्ड
- KKR ने स्टार कल्चर को पीछे छोड़ा
- MI पर पड़ी हार्दिक विवाद की छाया
- ब्रॉडकास्टर पर रोहित ने उठाए सवाल

धोनी क्या करेंगे | इस सीजन फैंस ने रोहित के मामले में MI की बेरुखी देखी, जबकि चेन्नै सुपर किंग्स में एमएस धोनी का कद और बढ़ गया। धोनी ने भविष्य की तैयारी के लिए स्वेच्छा से कप्तानी छोड़ी और रुतुराज गायकवाड़ को जिम्मेदारी सौंप दी। हालांकि IPL से संन्यास के सवाल पर वह फिर कोई जवाब दिए बिना चले गए। धोनी के समकक्ष दिनेश कार्तिक ने अपना आखिरी IPL मैच खेल लिया है।

नियम पर सवाल | यह सीजन याद रह जाएगा चौकों-छक्कों की बारिश के लिए भी। बैटिंग ने दर्शकों को रोमांचित किया और बोलर्स परेशान रहे। कुछ खिलाड़ियों ने महसूस किया कि IPL में गेंद और बल्ले का संतुलन बिगड़ रहा है। गेंदबाजों के लिए इस खेल में कुछ भी नहीं रह गया है। छोटे होते ग्राउंड के साथ इम्पैक्ट प्लेयर रूल पर सवाल उठे। सभी ने माना इस नियम ने ऑलराउंडर्स की भूमिका को कम किया है। BCCI ने नियम पर पुनर्विचार की बात कही है।

खेल से ज्यादा मनोरंजन | हालांकि नियम बदले जाने की संभावना कम ही दिख रही है। वजह कि IPL खेल से ज्यादा मनोरंजन है। चौके-छक्के ही हैं, जो दर्शकों का सबसे ज्यादा मनोरंजन करते हैं। वह रनों की बारिश ही है, जिसमें नहाने दर्शक स्टेडियम पहुंचते हैं। इस कारण ही कभी तमाशा तो कभी त्योहार की उपमा पाने वाली इस लीग में सबसे अधिक ख्याल दर्शकों का रखा जाता है। दर्शकों के लिए खिलाड़ी यहां खेलते हैं, नाचते हैं, गाते हैं।

अगले अध्याय का इंतजार | IPL सही मायने में क्रिकेट का ऐसा महाकाव्य है, जिसके हर अगले अध्याय में एक नया रोमांच, नई प्रतिद्वंद्विता, नया विवाद दिखता है। कोलकाता नाइट राइडर्स के फैंस के लिए हैपी एंडिंग के साथ इस महाकाव्य का एक और अध्याय समाप्त हो चुका है। अब नवरस में डूबी इस लीग के आलोचक और प्रशंसक दोनों ही एक साथ बैठकर अगले अध्याय का बेसब्री से इंतजार करेंगे।

थोड़ा टाइम का मचमच अऊर बचेलाए

दीपक पाचपोर

इलेक्शन का टाइम बोले तो श्याणा लोग जानताए कि कोई कूं बी जीतने दो पन तुमारा टेंशन कमती नईं होएंगा। टेंशन बोले तो दो टाइप का होताए। वो तुम इसी बखत पे देखने कूं सकताए। एक वईसा लोग का टेंशन जो खाली येईच टाइम पे हात-पैर हिलाएंगा। वो फुलटू टेंशन में दिखेंगा। अईसा लोग का स्पेशिलिटी अईसाए भिड़ू, कि जबी बी लोकसभा का इलेक्शन होताए तबी वो इसका वेट पिछला इलेक्शन का एकदम बाद से करताए। विधानसभा का इलेक्शन हो जाएंगा तबी अगला विधानसभा का इंतज़ार करेंगा। पांच साल होन दो कि दस साल, एकदम शांति से बईठ के इंतजार करेंगा।

तुम पूछेंगा कि अईसा कऊन येड़ा लोग होताए, तबी अपुन तुमकूं जो बताएंगा वो शांति से सुन के, समझ लेने का। भौत सा लोग का एकईच काम होताए- तिकिट मांगने का। वो पैले से तुमारा टच में रहेंगा। तुमारा घर से कागज लेके जाएंगा अऊर साहेब का साइन कराके घर पे छोड़के जाएंगा। जाते टाइम बोल के जाएंगा, 'काका, कोई बी काम पड़ताए, बिंदास अपुन कूं फोन मारने का। नाली का सफाई नईं होताए, पावर कट होताए, खाली ऑडर करने का।'

बाबूराव बोलताए, 'अईसा लोग तुमारा काम करेंगा अऊर पार्टी का भीतर अपना नंबर बढ़ाएंगा। इलेक्शन टाइम पे बताएंगा कि कित्ता लोग का काम पांच साल का भीतर किएला। भिड़, कबी जाके देखने का। तुमारा बी नाम होएंगा। बोले तो वो भौत पैले से पब्लिक का काम करेंगा। थोड़ा भौत लोग अईसा भी रैता है वो कोई का बी वास्ते बोले तो झंडा उठाके जुलूस में जाएंगा, वोटिंग का दिन मतदान केन्द्र का बाहर टेबल लगा के वोटर का नाम लिस्ट का भीतर चेक करके स्लिप देंगा अऊर बताएंगा कि किसकूं वोट करने का। अईसा लोग को तिकिट-बिकिट से कुछ लेने का नईं। उसका केंडिडेट हार बी जायेंगा तबी बी उसकूं वांदा नईं। वो दूसरा सुबू से अगला इलक्शन का शांति से इंतजार करेंगा।'

अबी तुम पूछेंगा कि दूसरा कऊन लोग होताए जो अगला इलेक्शन का इंतजार करताए, तबी अपुन बताएंगा कि अपुन अऊर तुमारा जईसा लोग। सब लोग क्या सोचताए कि इलेक्शन का टाइम पे जबी कोई वोट मांगने आएंगा तबी अपुन अपना छोकरा का बात करेंगा कि, 'बाबा, अपुन जबी से तुमकूं कोई बी इलेक्शन में देखताए, आई शप्पथ, दूसरा केंडिडेट का तरफ मुंडी उठाके भी नईं देखेला।' अईसा मस्का लगा के जबी तुम कहेंगा कि, 'भाऊ, अपुन का छोकरा बीए किएला। इसकूं किदर बी काम पे लगाने का।' भाऊ क्या बोलताए? वो बोलेंगा कि, 'अबी तुम देखताए न कईसा इलेक्शन का बोमाबोम होताए। पैले इलेक्शन हो जाने का।' गर्दी में इतना मचमच होताए कि तुमकूं अपना प्रॉब्लेम बताने का कोई फायदा नईं होएंगा। खाली पीली टाइम खोटी होएंगा। भाऊ का पीए घोषणापत्र का 25-50 कॉपी तुमकूं तुमारा सोसायटी में बांटने का वास्ते देंगा। तुमकूं अपना एक कार्यकर्ता बी देंगा कि इसकूं अपना बाइक पे ले जाने का।

अब तुम क्या करेंगा, बॉस? टपोरी कूं लेके जायेंगा। घंटा दो घंटा उसका साथ टोटल फ्लैट का घंटी बजाके घोषणापत्र बांटेंगा अऊर कार्यकर्ता को छोड़ने कूं जाएंगा। तुम सोचेंगा कि भाऊ को एक बार अऊर छोकरा का नौकरी का वास्ते रिमाइंड करेंगा पन क्या देखताए कि वो प्रचार का वास्ते पैले से निकल गएला। अबी तुम समझा न कि कऊन-कऊन लोग इलेक्शन का वेटिंग करताए? खाली एकईच बात को ख्याल में रखने का। वो तिकिट का वास्ते अगला इलेक्शन का इंतजार करताए न, उसकूं कबी ना कबी तिकिट मिल जाएंगा- लोकसभा का नईं तो विधानसभा का, नईं तो नगर पालिका नईं तो ग्राम पंचायत का। पन तुमारा छोकरा का बोले तो डाउट है भिड़। तो बी वेट करने का। थोड़ा टाइम का मचमच अऊर बर्चेलाए।

Ai Image

खाली पीली

शेयर करें अपने अनुभव

आम मुंबइया भाषा में यह लेख कैसा लगा हमें बताएं **nbtreader@timesgroup.com** पर, और सब्जेक्ट में लिखें-**'खाली पीली'**

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

जहां संयम नहीं है, संकट वहीं अपना घर बनाता है

आचार्य रूपचंद्र

इच्छाएं अनंत आकाश और गहरे पाताल से भी बड़ी होती हैं। उसे नापना या उनकी थाह ले पाना बहुत मुश्किल है। ऐसा कोई नहीं होगा जिसकी सौ प्रतिशत ख्वाहिशें पूरी हुई हों। हमें मालूम है कि इच्छा कभी खत्म नहीं होती, फिर भी हम उसके पीछे-पीछे भागते रहते हैं। ख्वाहिशें ही हैं जो देशों के बीच जंग करा रही हैं, अपनों को पराया बना रही हैं। वे इच्छाएं ही हैं जो चुनावी मैदान में एक-दूसरे को नीचा दिखाने के लिए बाध्य कर रही हैं। सबको पता है कि ऐसे हालात में देश का माहौल कैसा विचित्र हो जाता है।

दरअसल यह ऐसी भूख-प्यास है जो कभी बुझने का नाम नहीं लेती है। आखिर कौन सी है वह प्यास जो सब लील लेने वाली ज्वाला की तरह जीवन की अनंत-धारा को भी पी जाती है? कौन-सी है वह भूख जो अनंत वैभव-संपदा से संपन्न इस जीवन को दीन, दरिद्र और दयनीय बना देती है? उपनिषद् कहते हैं, वह माया है। बुद्ध तृष्णा कहते हैं। भगवान् महावीर का कहना है कि यह अज्ञान-जनित इच्छाओं का अनंत विस्तार है, जिसका कहीं भी अंत नहीं है।

माया दरअसल छाया की तरह होती है। तृष्णा या इच्छाओं की मौजूदगी। हम उसको जितना पकड़ने की कोशिश करते हैं, वह उतना ही सरक जाती है। हाथ में आकर भी वह हाथ में नहीं आती है। यही वजह है कि आदमी इसे पाने के लिए उम्र भर दौड़कर भी प्यासा ही रह जाता है। वह इस माया या तृष्णा को पार नहीं कर पाता है। यहीं गुरु और ज्ञान की जरूरत महसूस होती है। गुरु का महत्व इसलिए बताया गया है कि वह शिष्य का मुंह छाया से मोड़कर सूरज की ओर कर देता है। जैसे ही हमने सूरज की ओर मुंह किया, हम आगे हो जाएंगे, छाया पीछे रह जाएगी। ठीक ऐसे ही माया से मुक्त होने के लिए हम अपना मुंह परम ज्योति की तरफ कर लें। हमने अपना मुंह जैसे ही इंद्रिय-जगत से मोड़ा, आत्म-जगत से जोड़ा, माया पीछे छूट जाएगी। यह सूरज धर्म का प्रतीक है। धर्म आदमी के भीतर सोई हुई अनंत शक्तियों से पहचान कराता है। वह हाथों को कर्म, पांवों को गति, आंखों को रोशनी, मन को विश्वास और दिमाग को प्रखर सोच देता है।

यह सवाल भी उठ सकता है कि अगर इच्छाएं ही नहीं होंगी तो दुनिया, समाज और खुद का development कैसे होगा? इसके बिना तो science भी अपनी खोज नहीं कर पाएगा। लेकिन सवाल सिर्फ एक है कि कैसी इच्छाएं होनी चाहिए? जो मानवता के विकास में बाधक न बने, जो समाज के हिस्से न करे और जो आदमी को गलत रास्ते पर न चलाए। यह तभी संभव है जब भारतीय संस्कृति के मूल्यों को अपनाने के लिए तैयार होंगे। यानी संयम और चरित्र। संयम के अभाव में इच्छाएं भी बेलगाम हो जाती हैं। व्यक्तिगत जीवन हो या सामाजिक, उसके संकट का सबसे बड़ा कारण है, हमारा असंयम और चरित्रहीनता। इन दोनों के कारण ही जीवन बदसूरत और बेमतलब बन रहा है। हम भटकने के लिए मजबूर हो रहे हैं। जीवन को कहां और कैसे ले जाना है, अगर यह समझ में आ जाए तो हम इच्छाओं को आसानी से नियंत्रित कर लेंगे।

प्रस्तुतिः आनंद भारती

बहुमत होने पर भी आप राज्यसभा सीटें हार जाएं तो किस बात की सरकार हुई

हिमाचल प्रदेश की चार लोकसभा सीटों के लिए 1 जून को वोटिंग होनी है। पिछले लोकसभा चुनाव में BJP ने चारों सीटें जीती थीं। राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री और मौजूदा नेता प्रतिपक्ष जयराम ठाकुर इसके लिए प्रचार में जुटे हैं। चुनावी माहौल से लेकर विपक्ष के आरोपों तक तमाम मुद्दों पर **जयराम ठाकुर** से बात की **पूनम पाण्डे** ने। पेश हैं बातचीत के अहम अंश :

■ हिमाचल में क्या है चुनाव का माहौल?

जिस तरह देश भर में नरेंद्र मोदी को तीसरी बार प्रधानमंत्री बनाने का माहौल है, वैसे ही हिमाचल प्रदेश में भी वोटरों के मन में यही बात है।

■ आपने कहा कि तीसरी बार नरेंद्र मोदी पीएम बनेंगे। इतने कॉन्फिडेंस की वजह?

सबसे बड़ी वजह ऐसा नेतृत्व है जिसने देश के लिए काम किया है। प्रधानमंत्री के 10 साल के कार्यकाल में एक भी आरोप नहीं। विकास हुआ है। बड़े जटिल मुद्दे थे, राम मंदिर निर्माण, आर्टिकल-370, महिलाओं के लिए 33% आरक्षण, CAA, ट्रिपल तलाक। एक-एक करके ऐसे जटिल मुद्दों का समाधान होता दिखा है।

विशुद्ध राजनीति इंटरव्यू

■ आप कह रहे हैं कि पीएम पर कोई आरोप नहीं है, लेकिन विपक्ष तो लगातार आरोप लगा रहा है। क्या कहेंगे?

इस तरह के आरोप तब लगाए जाते हैं जब किसी के ऊपर कोई आरोप ही नहीं होता। लोकतांत्रिक प्रक्रिया के तहत चुनाव हो रहा है। बाद में यही होता है कि विपक्ष हार जाता है और फिर आरोप लगाता है कि EVM खराब है। ये सब बे सिर-पैर के आरोप हैं। कांग्रेस-विपक्ष के लोग परेशान हैं। उनका देश के विकास से कोई सरोकार नहीं होता था। उनके लिए देश तभी अच्छा होता था, जब उनके लिए अच्छा होता था। नरेंद्र मोदी का नजरिया इससे विपरीत है।

■ ED सहित दूसरी जांच एजेंसियों के दुरुपयोग के भी आरोप लगाए गए हैं...

कांग्रेस के वक्त में एजेंसियां सरकार की कठपुतलियां हो गई थीं, उन्हें स्वतंत्र होकर काम करने का मौका नहीं मिला। जबसे नरेंद्र मोदी आए, उन्होंने पूरी छूट दी। चाहे सेना का मामला हो या जांच एजेंसियों का, वे स्वतंत्र होकर काम कर रही हैं और जहां उन्हें गलत लगता है, कार्रवाई करते हैं। विपक्ष के लोग इसलिए फंसते हैं क्योंकि वे चोरी करते हैं।

■ आपको लगता है 10 सालों में रोजगार की दिशा में जितना काम होना चाहिए था, वह हुआ है?

हर चुनाव में बेरोजगारी और महंगाई का मुद्दा उठता है। लेकिन नरेंद्र मोदी ने देश के बेरोजगार नौजवानों को अपने पांव पर खड़े होने के लिए इतने सारे मौके दिए हैं। देश की इकॉनमी ग्रो कर रही है तो स्वाभाविक रूप से रोजगार मिल रहा है।

■ मंडी सीट पर अभिनेत्री कंगना रनौत BJP उम्मीदवार हैं। क्या कार्यकर्ताओं को ऐसा नहीं लग रहा कि पैराशूट कैंडिडेट उतार दिया गया है?

हमारी पार्टी में कार्यकर्ताओं का पूरा सम्मान होता है। लेकिन उसके बावजूद पार्टी कई बार इस प्रकार के निर्णय लेती है। जो फैसला केंद्र का नेतृत्व लेता है, हम सब उसके साथ चलते हैं। बहुत कार्यकर्ता चुनाव लड़ने के इच्छुक थे, लेकिन फैसला हुआ और फैसले के बाद सब एकजुट होकर काम में जुट गए। मंडी सीट पर भी BJP ही जीतेगी।

■ पिछले चुनाव में BJP ने चारों सीटें जीती थीं। मगर मंडी उपचुनाव में BJP ने यह सीट गंवा दी। क्या मंडी सीट इस बार भी टफ लग रही है?

तब अलग स्थिति थी। वीरभद्र जी कांग्रेस के सबसे बड़े नेता थे और अचानक उनकी मृत्यु होने के बाद वह चुनाव हुआ था। उनकी पत्नी जब चुनाव में खड़ी हुईं तो सहानुभूति का फैक्टर था। वह करीब 4 हजार वोटों से जीतीं। लेकिन अब स्थिति अलग है। यह चुनाव देश में सरकार बनाने, प्रधानमंत्री बनाने के लिए हो रहा है। कांग्रेस पार्टी दूर-दूर तक सत्ता में आने वाली नहीं है। ऐसे में क्या हासिल होगा, यह भी सोचने का विषय है। देश ने तय कर लिया है BJP की सरकार बननी है और हिमाचल की भी चारों सीटें BJP जीतेगी।

■ हिमाचल की छह विधानसभा सीटों पर उपचुनाव भी हो रहे हैं...

हिमाचल में कांग्रेस की 15 महीने की सरकार में लूट-खसोट की ऐसी स्थिति बनी कि उनकी ही पार्टी के बहुत सारे लोग नाराज हो गए। नैतिकता के आधार पर तो सत्ता में रहने का कोई अधिकार उन्हें नहीं है। जब बहुमत होने के बावजूद राज्यसभा की सीट हार जाते हैं तो किस बात की सरकार! उन्हें त्यागपत्र देना चाहिए था।

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

■ टेंशन नहीं लेने का

संपादकीय पेज पर 21 मई को खाली पीली कालम पढ़ने को मिला। चुनाव का समय आते ही चारों तरफ हलचल शुरू हो जाती है। हर तरफ वोट मांगने वाले लोग दिखाई देते हैं, हर घर पर दस्तक होती है। इस वक्त ज्यादा टेंशन लेना सही नहीं है। हमें सबको प्रेम से सुनना चाहिए, उनकी बातों का ध्यान से सुनना चाहिए, परंतु उनका दबाव नहीं झेलना चाहिए। चुनाव में कौन जीतेगा, कौन हारेगा, यह तो वक्त ही बताएगा। हम अपना वोट सही ढंग से देकर अपना कर्तव्य निभाते हैं। जरूरत है कि चुनाव के चक्कर में अपने आपसी रिश्ते ना खराब होने पाएं।

दीपक कोटियाल, उत्तम नगर

■ दोषियों को मिले सज़ा

27 मई का संपादकीय 'नियमों पर अमल हो' पढ़ने को मिला। गुजरात के राजकोट में लगी आग अभी ठंडी भी नहीं पड़ी थी कि दिल्ली में आग से सात मासूमों की जीवनलीला समाप्त हो गई। अब इनकी जांच के आदेश होंगे, जांच होगी, रिपोर्ट आएगी, मगर पहले की तरह अब भी इनसे कोई सबक नहीं लेगा। इसी मामले की तरह बिना फायरविभाग से NOC लिए बड़ी लापरवाही से नर्सिंग होम और विभिन्न संस्थाएं चलाई जा रही हैं। लापरवाही के कारण हो रहे इन हादसों पर विराम लगाया जाना चाहिए।

खाली पीली

मीना धानिया, सिरसपुर

■ कोई फर्क नहीं पड़ा

संपादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित 'कार्यशैली में सुधार हो' (24 मई) पढ़ा। केंद्रीय चुनाव आयोग के साथ-साथ सभी संवैधानिक संस्थाओं को स्वायत्तता का वरदान इसलिए दिया गया था ताकि वे निरपेक्ष होकर अपना काम कर सकें। वर्तमान चुनाव के दौरान चुनाव आयोग ने दोनों मुख्य दलों को दिए आदेश में कहा है कि वे सांप्रदायिक भाषणों और संविधान की गरिमा को ठेस पहुंचाने से बचें। बावजूद इसके दोनों दलों पर कोई सकारात्मक असर नहीं पड़ा है।

मामचंद सागर, ईमेल से

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

हेमकुंट साहिब में भी रील्स पर लगा बैन- एक खबर
तो रील बनाने वाले खुफिया कैमरा खरीद लेंगे!

नयना सोनी

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी वेनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्सः 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.
संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अनर्गत उत्तरदायी)

कम मतदान
चिन्ता का कारण

कम मतदान वर्तमान लोकसभा चुनाव में चिन्ता का कारण है। यह प्रवृत्ति मतदान के छठे चरण में भी जारी रही। इसका कारण गर्मी या शायद राजनेताओं से निराशा या निष्क्रियता हो। शायद बहुत से मतदाता सोचते हों कि राजनीतिक पार्टियों ने हमारे देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था की हालत खराब कर दी है। पश्चिम बंगाल एक अपवाद है जहां मतदाता बड़ी संख्या में सामने आए, पर अधिकांश अन्य राज्यों में वे मतदान केन्द्रों पर उतने जोश से नहीं आए। मतदान के छठे चरण में भी स्थिति पहले जैसी रही। पूरे भारत में मतदाता सहभागिता में चिन्ताजनक रूप से कमी आ रही है। हालांकि, यह प्रवृत्ति सभी क्षेत्रों में नहीं है, बंगाल तथा जम्मू कश्मीर उल्लेखनीय अपवाद हैं जहां यह तुलनात्मक रूप से स्थिर है या इसमें वृद्धि हुई है। मतदाताओं की सहभागिता घटने के पीछे के कारण समझना जरूरी है ताकि भारत की लोकतांत्रिक प्रक्रिया के समक्ष आने वाली चुनौतियों को समझा जा सके। इस प्रवृत्ति के कुछ कारण हो सकते हैं। मौसम का बहुत खराब होना, पहले से ही निर्धारित झुकाव या स्वयं लोकतांत्रिक प्रक्रिया से ही बढ़ती निराशा इनमें शामिल हैं। मौसम के बहुत खराब होने से मतदाताओं की संख्या घटी है। छठे चरण के मतदान के समय मौसम बहुत खराब रहा और कई क्षेत्रों में भयानक लू चल रही थी। इससे खासकर वृद्ध व स्वास्थ्य समस्यों से ग्रस्त मतदाता मतदान केन्द्रों तक जाने से हतोत्साहित हो सकते हैं। इस परिघटना का एक कारण यह भी हो सकता है कि मतदाताओं ने किसी खास पक्ष को चुन लिया हो और यह अनुमान लगा कर वे मतदान से विरत रहे हों कि उनका उम्मीदवार हारने वाला है।

वास्तव में कमजोर उम्मीदवारों के समर्थक निराश हो सकते हैं। उन्होंने

सोचा होगा कि उनके वोट से परिणाम नहीं बदलने वाला है, इसलिए उन्होंने सहभागी होना पसंद नहीं किया। दूसरी ओर विजेता पार्टी के समर्थक भी लापरवाह हो सकते हैं। लेकिन शायद घटते मतदान के पीछे सर्वाधिक चिन्ताजनक कारण स्वयं लोकतांत्रिक प्रक्रिया से निराशा हो सकती है। यदि सोशल मीडिया पर ध्यान दिया जाए तथा 'अफवाहों' पर गौर किया जाए तो मामला समझ में आ सकता है। अधिकांश लोग मुख्यत: दो श्रेणियों में आते हैं। प्रतिबद्ध तथा अत्यधिक जोशीले लोगों के अलावा निराश लोगों की एक श्रेणी है जो पूरे कार्यक्रम को निरर्थक मानते हैं। उनको लगता है कि उनके द्वारा चुनी गई सरकार केवल अपने लिए काम करेगी। लोकतांत्रिक प्रक्रिया के लिए यह अविश्वास विभिन्न आयामों से पैदा हो सकता है। अनेक मतदाताओं को लग सकता है कि उनकी सहभागिता से प्रशासन में समुचित परिवर्तन या सुधार नहीं आएगा। अक्षमता की इस सोच के कारण लोग मतदान से हतोत्साहित हो सकते हैं। शायद वे 'संवेदनहीन' व्यवस्था में सहभागी होना ज्यादा लाभदायक न मानें। इसके साथ ही बार-बार चुनाव वाले क्षेत्रों में मतदाता चुनावी थकान से ग्रस्त हो सकते हैं। बार-बार मतदान के चक्र से उसका अनोखापन तथा नागरिक कर्तव्य की भावना समाप्त हो जाती है। प्रभावशाली उम्मीदवारों की कमी भी कम मतदान का कारण हो सकती है। यदि मतदाताओं को लगे कि सभी विकल्प समान रूप से अयोग्य या भ्रष्ट हैं तो वे मतदान से गायब रहने का निर्णय कर सकते हैं। राजनीतिक हिंसा से ग्रस्त क्षेत्रों में सुरक्षा सरोकारों के कारण बड़ी संख्या में मतदाता मतदान से विरत रह सकते हैं। इस परिदृश्य में जम्मू कश्मीर में अपवाद स्वरूप बड़ी संख्या में मतदाताओं के आने से उनका लोकतांत्रिक प्रक्रिया की निष्पक्षता तथा अपने राज्य के भावी विकास के प्रति विश्वास प्रकट होता है। जम्मू कश्मीर की बेहतर कानून व्यवस्था भी इसका कारण है।

लोकसभा चुनाव के प्रमुख आयाम

लोकसभा चुनाव में एम फैक्टर्स या आयाम महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें मीडिया, मनी, महिला, माइक्रोइकोनामी के साथ अब मोदी, मंदिर तथा मंगलसूत्र आयाम भी जुड़ गए हैं।

प्रो. विवेक सिंह
(लेखक, राजनीतिक विश्लेषक हैं)

लोकसभा चुनाव 2024 में अब एक चरण का ही मतदान बाकी है। वर्तमान लोकसभा चुनाव में ऐसे अनेक महत्वपूर्ण आयाम हैं जिनका मतदाताओं पर व्यापक असर पड़ता है। उनमें से 11 आयाम प्रमुख हैं जो एम से शुरू होते हैं। इनमें पहला एम मीडिया है। समाज की दशा को दिखाने और समाज को दिशा दिखाने में मीडिया का बेहद महत्वपूर्ण भूमिका है। मीडिया समाज का दर्पण है। समय में बदलाव के साथ मीडिया में भी बड़े बदलाव हुए हैं। आज इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया के साथ सोशल मीडिया भी कदमताल कर रहा है। समस्त राजनीतिक दल मीडिया का भरपूर उपयोग कर रहे हैं। मोबाइल हैंडसेट और इंटरनेट की सुलभता से मीडिया आज हर घर तक पहुंचने में समर्थ है। पल भर में कोई खबर या घटना करोड़ों लोगों तक पहुंच रही है। एक तरफ जहां सरकार मीडिया का इस्तेमाल करके अपनी उपलब्धियां को जनता तक पहुंचाने का प्रयास करती है वहीं दूसरी तरफ विपक्ष सरकार की नाकामियों को जनता तक ले जाती है। मीडिया राजनीतिक दलों के लिए प्रमोशन का सबसे उत्तम साधन है। मीडिया के उपयोग से एक पार्टी या नेता की छवि को बेहतर से बेहतरीन किया जा सकता है।

महिलाएं वर्तमान लोकसभा चुनाव को प्रभावित करने वाले सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक हैं। देश में कुल 97.6 करोड़ वोटर हैं जिनमें महिलाओं की संख्या 47.1 करोड़ है। महिला परिवार की सबसे सशक्त कड़ी होती है। एक महिला का रुझान मतदाता के रूप में किसी पार्टी या गठबंधन को सफल बना सकता है। महिलाओं के लिए महिला सुरक्षा, महंगाई, रोजगार के अवसर, सामाजिक बराबरी, आर्थिक विकास जैसे मुद्दे काफी अहम हैं। पिछले कई चुनावों में महिला वोट सरकार को बनाने या गिराने में निर्णायक भूमिका निभाता रहा है। चुनाव में मुस्लिम फैक्टर काफी महत्वपूर्ण है। शुरू से मुसलमान कांग्रेस के साथ रहे हैं लेकिन क्षेत्रीय दलों की मजबूती से आज स्थिति पहले से अलग है। मुस्लिम मतदाता बिखरे हुए हैं। कांग्रेस के साथ-साथ मुस्लिम मतदाता तृणमूल कांग्रेस, एनसीपी, समाजवादी पार्टी, एआइएमआइएम जैसी पार्टियों से बड़ी संख्या में जुड़े हुए हैं। मुस्लिम मतदाताओं का बिखराव किसी पार्टी के लिए वरदान तो किसी पार्टी के लिए अभिशाप सिद्ध होता रही है। वर्ष 2022 के उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव में एआइएमआइएम के प्रदेश में चुनाव लड़ने से मुस्लिम मतदाताओं में बिखराव हुआ जिसका नुकसान समाजवादी पार्टी और कांग्रेस को हुआ, जबकि इससे बीजेपी को फायदा हुआ। पूर्व के लोकसभा और राज्यों के अनेकों विधानसभा के चुनावों में यह भी देखने को मिला है कि मुस्लिम समुदाय की गोलबंदी की वजह से हिन्दू समुदाय की गोलबंदी हुई जिससे चुनाव में बड़े उलटफेर हुए। मुस्लिम महिला मतदाताओं का रुझान ट्रिपल तलाक पाबंदी और महिला सुरक्षा को लेकर हाल के वर्षों में बीजेपी के प्रति सकारात्मक रूप से बदला है जिसका असर चुनावी नतीजों के रूप में जाहिर है। कोई दो राय नहीं है कि धार्मिक दृष्टि से देश के दूसरे सबसे बड़े मुस्लिम समुदाय की इस चुनाव में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका रहगी।

चुनाव के संदर्भ में मार्केटिंग की बढ़ती भूमिका के लिए-बिन मार्केटिंग सब सून कहा जा सकता है। मार्केटिंग टैक्टिक्स का उपयोग करके जनता को अपनी सरकार या पार्टी की तरफ आसानी से आकर्षित किया जा सकता है। बिना अच्छी मार्केटिंग के देश और समाज में पार्टी की वैल्यूएबल ब्रांड इमेज बनाना लगभग असंभव है। चुनावी मैनिफेस्टो, नीतियां, लीडरशिप, गवर्नेंस और उपलब्धियां को भारत जैसे बड़े देश की 140 करोड़ जनता तक पहुंचाने के लिए मार्केटिंग का सहारा लेना आवश्यक है। मार्केटिंग का मुख्य कार्य सकारात्मक नीति, नीयत और नेतृत्व को जनता तक पहुंचना है। मार्केटिंग के लिए प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के साथ ही साथ सोशल मीडिया का उपयोग किया जा सकता है। मार्केटिंग सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूप में हो सकती है। पार्टियां स्वयं के लिए सकारात्मक मार्केटिंग जबकि विरोधी पार्टियों के लिए नकारात्मक मार्केटिंग का उपयोग करती हैं। इस चुनाव के दौरान एक और एम फैक्टर उभरकर सामने आया है जिसका असर चुनाव पर होगा वह है मंगलसूत्र। ग्रामीण भारत में मंगलसूत्र वैवाहिक स्थिति को प्रदर्शित करता है। यह हमें याद रखना चाहिए कि देश की 70 प्रतिशत आबादी गांव में ही निवास करती है। मंगलसूत्र प्रसंग का व्यापक असर इस चुनाव में देखने को मिल सकता है क्यूंकि यह महिलाओं से भावनात्मक रूप से जुड़ा हुआ है।

चुनावी दृष्टिकोण से पिछले 10 वर्षों में देश में मोदी फैक्टर सबसे बड़े फैक्टर के रूप में उभरा है। मोदी फैक्टर भारतीय जनता पार्टी के लिए सबसे बड़ा और मजबूत फैक्टर है। यह एक ऐसा चुनावी फैक्टर है जो चुनाव के अन्य बड़े फैक्टर्स पर भारी है, इसकी अनदेखी करना मानो अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारना है। देश में कई जगहों पर ऐसी स्थिति बन गई है जहां मतदाताओं को स्थानीय उम्मीदवार से कोई मतलब नहीं है बस मोदी फैक्टर की वजह से वे उम्मीदवार को वोट देंगे। मोदी फैक्टर को सपोर्ट करने के लिए योगी फैक्टर, हिंदुत्व फैक्टर और डेवलपमेंट फैक्टर भी है। नई पीढ़ी के मतदाताओं में मोदी फैक्टर का अपना क्रेज है। बिना धनबल के चुनाव लड़ना और जीतना लगभग नामुमकिन है। धन का उपयोग चुनावों में सभी पार्टियां बड़े पैमाने पर करती रही हैं। प्रचार के लिए अरबों रुपए की आवश्यकता होती है। हर पार्टी वैधानिक रूप से चंदा स्वीकार करती है और प्राप्त धन का उपयोग चुनाव लड़नें में करती है। चुनाव में ब्लैक मनी के इस्तेमाल या फिर पैसा देकर वोट खरीदने की कोशिश से समस्या पैदा होती है। पैसे के लोभ में कुछ मतदाता आ जाते हैं, चुनाव आयोग की सख्ती और सक्रियता के कारण इस तरह की गतिविधियों में काफी कमी आई है। कोई भी प्रत्याशी एक सीमा से अधिक धन का उपयोग, चुनाव लड़ने के लिए नहीं कर सकता है। धनबल और बाहुबल पर चुनाव आयोग ने नकेल कसी है।

मैक्रोइकॉनॉमिक इंडिकेटर्स भी चुनाव को काफी हद तक प्रभावित करते हैं। माइक्रोइकोनॉमिक इंडिकेटर्स बताते हैं कि देश की आर्थिक विकास दर कैसी है। इसमें जीडीपी विकास दर, प्रति व्यक्ति आय, फॉरेक्स रिजर्व, टैक्स प्राप्ति, बैलेंस ऑफ पेमेंट, शेयर मार्केट इंडेक्स, नेशनल इनकम, प्रतिमाह जीएसटी संग्रह, बेरोजगारी दर, महंगाई दर इत्यादि समावेशित होते हैं। शहरी और उच्च शिक्षित मतदाताओं के लिए मैक्रोइकॉनॉमिक इंडिकेटर्स ज्यादा मायने रखते हैं। मैक्रोइकॉनॉमिक इंडिकेटर्स यदि सकारात्मक हैं तो सत्तारूढ़ दल को फायदा अन्यथा नुकसान होता है। हर संस्कृति और सभ्यता में धार्मिक स्थल से जुड़े प्रतीकों का खास महत्व रहा है। भारतीय संस्कृति भी उनमें से एक है। राम मंदिर देश की 110 करोड़ से अधिक आबादी वाले हिंदू समाज की आस्था, स्वाभिमान और सम्मान से जुड़ा हुआ है।

500 वर्ष से अधिक के वैचारिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संघर्ष के बाद अयोध्या में राम मंदिर का मार्ग प्रशस्त हुआ। मंदिर की प्रासंगिकता राजनीतिक दृष्टि से पहले जैसी ही बनी हुई है। जब राम मंदिर का मार्ग प्रशस्त नहीं था तब भी राम मंदिर राजनीति के केंद्र में था और आज मंदिर निर्माण के बाद भी राजनीति के केंद्र में है। आस्था कभी पुरानी नहीं होती है। राम मंदिर निर्माण से टेंपल इकोनॉमी मॉडल को एक नया आयाम मिला है। इस चुनाव में भी मंदिर की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। महंगाई एक ऐसा विषय है जो हर चुनाव को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता रहा है। महंगाई एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है। अर्थव्यवस्था में कम और संतुलित महंगाई का अपना महत्व है। महंगाई को समाप्त या रोका नहीं जा सकता हां महंगाई पर मैद्रिक नीतियों के जरिए नियंत्रण रखा जा सकता है। महंगाई दर 3-5 प्रतिशत तक है तो इसे बुरा नहीं माना जाता है। महंगाई दर कितनी भी रही हो, दुर्भाग्यवश जाति और धर्म के सामने महंगाई कभी भी मुख्य चुनावी मुद्दा नहीं रहा है। इस बार के चुनाव में महंगाई का निश्चित तौर पर असर होगा लेकिन असर कितना होगा यह चुनाव परिणाम के बाद ही पता चलेगा

सभी राजनीतिक दल चुनाव से पहले अपना चुनावी घोषणापत्र या मैनिफेस्टो जारी करते हैं ताकि जनता को यह बताया जा सके कि मतदाता उनको क्यूं चुनें और सत्ता में आने पर उनकी प्राथमिकता क्या होगी, क्या कार्य करेंगे। चुनावी घोषणापत्र मतदाताओं को अपने दल की तरफ आकर्षित करने के उद्देश्य से बनाया जाता है। चुनावी घोषणा पत्र को समझने के उपरांत ही मतदाता इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि उसे किस पार्टी को वोट देना है या किस पार्टी को वोट नहीं देना है। चुनाव में एम फैक्टर्स की विशेष भूमिका रहती है। एम फैक्टर्स को साधे बिना चुनावी वैतरणी सफलतापूर्वक पार करना मुश्किल है। सभी पार्टियां एम फैक्टर्स के प्रति सचेत हैं और इनको अपनी तरफ साधने में लगी हैं। 4 जून को चुनाव परिणाम आ जाएंगे, जीत उसी दल और गठबंधन की होने की अधिक संभावना होगी जो इन एम फैक्टर्स को साधने में सफल रहेगा।

पंजाब में बहुकोणीय मुकाबला

पंजाब में लोकसभा के अंतिम चरण में चुनाव है। राज्य के मतदाताओं के पास वैसे तो अनेक विकल्प हैं, लेकिन उनको बहुत अच्छे उम्मीदवार नहीं मिले हैं।

सुखदेव सिंह
(लेखक, सेवानिवृत्त प्रोफेसर हैं)

लोकसभा चुनाव, 2024 में पंजाब में 20 मिलियन से अधिक मतदाताओं के समक्ष अनेक विकल्प हैं। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, आम आदमी पार्टी-आप, भारतीय जनता पार्टी-भाजपा, शिरोमणि अकाली दल-शिअद, बहुजन समाज पार्टी-बसपा, भाकपा, माकपा और अन्य के उम्मीदवारों में से चुनाव करेंगे। इसके बावजूद उनमें जोश की कमी है, वहीं दूसरी ओर हर राजनीतिक पार्टी अपने उम्मीदवारों को सर्वोत्तम बता रही है, पर उसे मतदाताओं की प्रतिक्रिया के बारे में चिन्ता है। मतदाताओं में 'भयानक चुप्पी' है, जबकि राजनीतिक पार्टियां अपने उम्मीदवारों की सभी 13 लोकसभा सीटों पर जीत का दावा कर रही हैं। पिछले महीनों में राजनीतिक पार्टियों ने अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन कर 'मेकओवर' किया है। अनेक लोग मजबूत समझी जाने वाली पार्टियों में चले गए हैं और उन्होंने 'मजबूत' नेताओं को अपने साथ जोड़ा है। यह स्थिति राजनेताओं की इस 'गलत' समझ पर आधारित है कि लोकतंत्र का अर्थ 'बारी-बारी' से शासकों को चुनना तथा 'नागरिकों' को अपनी 'प्रजा' समझना है जो उनकी नीतियों पर चलते हैं। इस प्रकार लोकतंत्र पुन: परिभाषित होकर लोगों की लोगों द्वारा सरकार होती है, पर वह 'लोगों के लिए' नहीं होती है। राजनीतिक पार्टियां चुनाव के समय वादे करती हैं, पर जीतने के बाद वे अपने वादे पूरे नहीं करती हैं। चुनावों के बाद वे ऐसी नीतियों का पालन करती हैं जो राजनेता वर्ग, निगमों तथा उनके सहायकों को लाभ पहुंचाती हैं। इस प्रकार सत्ता में पहुंचने पर राजनीतिक पार्टियां और लोग असली मुद्दों को छोड़ कर भावनात्मक तथा हाशिये के मुद्दों पर काम करते हैं। इससे लोगों को कुछ हासिल नहीं होता है। इससे राजनीतिक पार्टियां 'निरर्थक' हो जाती हैं और वे मतदाताओं को वर्तमान 'पसंद की त्रासदी' वाली स्थिति में लाती हैं, जहां उनको 'वोट देने या न देने' अथवा 'किसे वोट देने और किसे वोट न देने' का निर्णय करना पड़ता है ऐसे में उम्मीदवारों और राजनीतिक पार्टियों में पसंद व्यापक होती है, पर 'मूलत:' वे सब एक जैसे होते हैं, केवल देखने में अलग दिखते हैं, पर कार्यों में समान होते हैं। इससे मतदाता भ्रमित तथा 'पसंद के लिए अभिशप्त' होते हैं। किसी राजनीतिक पार्टी ने अपने घोषणापत्र, भाषण या नारों में चंडीगढ़ व पंजाबी भाषी क्षेत्रों के हस्तांतरण, जल वितरण तथा राज्यों को अधिक अधिकार जैसे परंपरागत मुद्दे नहीं उठाए हैं। इसके साथ ही किसी पार्टी ने जनता के असली मुद्दों, जैसे बेरोजगारी, खराब शिक्षा, स्वास्थ्य व नागरिक सुविधाओं, विदेशों को पलायन, नशे, खनन, भ्रष्टाचार, कानून-व्यवस्था तथा शहरी विकास जैसे मुद्दों को मजबूती से नहीं उठाया है। इसके बजाय पालाबदल, चुनावी 'युद्ध' के पहले उम्मीदवार तलाशने का 'युद्ध' जारी है और पंजाब के चुनाव में कोई इसका अपवाद नहीं है। इससे लोगों में 'विश्वास की कमी' तथा 'आत्मविश्वास की कमी' पैदा हुई है और राजनेता वर्ग पार्टी बदलने व उम्मीदवार तोड़ने में लगा है। भाजपा को इस बात का श्रेय दिया जा सकता है कि वह जीवन्त अर्थव्यवस्था के साथ सुशासन चलाती है, पर उस पर अमीर-समर्थक तथा छोटे बिजनेसों, किसानों, दूकानदारों, शहरी व ग्रामीण गरीबों तथा धार्मिक ध्रुवीकरण के आरोप हैं। देश की अर्थव्यवस्था को 'दुनिया की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था' कहा जा रहा है, पर इसके लोग गरीब और बेरोजगार हैं तथा कीमतें बढ़ रही हैं।

कांग्रेस को समावेशी नीतियों का श्रेय दिया जा सकता है और उसने किसान-समर्थक एमएसपी का वादा किया है, पर उसमें भयानक गुटबाजी है तथा अतीत में उसका प्रदर्शन ठीक नहीं रहा है। 'आप' को मुफ्त बिजली व महिलाओं को मुफ्त बस यात्रा जैसी रियायतों का श्रेय दिया जा सकता है, पर उसका कामकाज ठीक नहीं है, वह अनुभवहीन है तथा दिल्ली पर अत्यधिक निर्भर है। शिअद ऐतिहासिक रूप से राज्य-समर्थक दृष्टिकोण अपनाता रहा है, पर पार्टी पर परिवार के नियंत्रण से उसकी छवि खराब हुई है और वह कार्पोरेट-समर्थक है। कम्युनिस्टों को उनकी ईमानदारी, प्रतिबद्धता, सेक्युलरवाद और गरीब-समर्थक विचारधारा का श्रेय दिया जा सकता है, पर उनके पास चुनाव लड़ने के लिए संसाधनों की कमी है, वे चुनाव जीतने में अक्षम हैं तथा सरकार में उनकी कोई खास भूमिका नहीं होगी। मतदाता भ्रमित हैं क्योंकि उनको यह विश्वास नहीं है कि कांग्रेस, भाजपा, शिअद या आप को दिया उनका वोट उम्मीदवार को विजय दिलाने के बाद उसी पार्टी में रखेगा और वह दूसरी पार्टी में जा सकता है। उनको यह भी नहीं लगता है कि पार्टियां जो कह रही हैं, वही करेंगी। इसके बावजूद उनको किसी न किसी को चुनना है। लेकिन यह तो मतदान वाले दिन होगा। वर्तमान समय में स्थिति राजनीतिक पार्टियों के घोषणापत्रों की तरह भ्रामक और अस्पष्ट बनी हुई है।

आप की बात

आरक्षण में सेंध

कोलकाता उच्च न्यायालय ने पश्चिम बंगाल सरकार को बड़ा झटका देते हुए 2010 के बाद जारी ओबीसी सर्टिफिक्रेट को कानून सम्मत न मानते हुए रद्द कर दिया। हससे देश भर में ओबीसी आरक्षण में सेंध लगाने के प्रयासों पर बहस शुरू हो गई है। भाजपा, माकपा और कांग्रेस के नेताओं ने इसके लिए ममता सरकार को जिम्मेदार बताया है। पश्चिम बंगाल सरकार ने करीब 77 मुस्लिम जातियों को आरक्षण की श्रेणी में रखते हुए ओबीसी के सर्टिफिक्रेट जारी किए थे। उच्च न्यायालय ने राज्य पिछड़ा वर्ग आयोग एवं पश्चिम बंगाल सरकार की कार्यशैली पर प्रहार करते हुए कहा कि धर्म को आरक्षण का एकमात्र आधार बनाया गया है जो कि न्याय संगत नहीं है और संविधान के विरुद्ध है। ममता बनर्जी ने सुप्रीम कोर्ट जाने का फैसला किया है। कोलकाता उच्च न्यायालय के फैसले के बाद राजस्थान व अन्य राज्यों में भी ओबीसी में मुस्लिम जातियों को शामिल कर आरक्षण में सेंध लगाने के प्रयासों पर व्यापक प्रतिक्रिया होने की उम्मीद है। ऐसे में केन्द्र सरकार, सर्वोच्च न्यायालय तथा राज्य सरकारों को सुनिश्चित करना चाहिए कि ओबीसी सूची में शामिल गैर-मुस्लिमों को कोई नुकसान न हो और पहले की तरह उनको नौकरियों व शिक्षा में आरक्षण की व्यवस्था निर्बाध रूप से जारी रहे।

- **वीरेन्द्र कुमार जाटव,** दिल्ली

अग्निकांडों से सबक

सैंतीस लोगों की जान लेने राजकोट गेम जोन हादसे में सुरक्षा के इंतजाम नहीं थे। अभी तक की जांच में संचालकों की घोर लापरवाही सामने आई है। राजकोट अग्निकांड पर गुजरात हाईकोर्ट ने स्वतंत्र रूप से संज्ञान लिया है। कोर्ट ने इस हादसे को मानव निर्मित त्रासदी बताते हुए बड़े शहरों के निगमों के साथ सरकार से जवाब मांगा है। दिल्ली में चाइल्ड केयर हॉस्पिटल में आग लगने से कई बच्चे मारे गए। छत्तीसगढ़ के बामेतरा भयानक विस्फोट से कई लोगों के मारे जाने और लापता होने के समाचार है। इस गर्मी में मार्च माह से ही लगातार भयानक अग्निकांड हो रहे हैं। विडंबना है कि सरकारें और प्रशासन हर अग्निकांड के बाद सख्त कार्रवाई करने का आश्वासन और मुआवजा देकर खामोश हो जाते हैं। भविष्य में सार्वजनिक स्थलों, कारखानों, हॉस्पिटलों, आदि को भयानक अग्निकांडों से बचाने के लिए अग्निशमन विभाग के और विस्तार के साथ ही अग्नि-सुरक्षा संबंधी कानूनों को अनिवार्य रूप से कठोरता से लागू किया जाना चाहिए। स्थानीय स्तर पर नगर निगम, अस्पताल व अन्य सार्वजनिक स्थल बार-बार अग्निशमन विभाग की चेतावनी के बावजूद उपयुक्त कदम नहीं उठाते हैं जिसका खामियाजा जनता भुगतती है।

- **सुभाष बुडावन वाला,** रतलाम

ऋषि सुनक का फैसला

ऋषि सुनक ने एक साल पहले मध्यावधि चुनाव कराने का फैसला किया है। हालांकि, इस समय उनकी तथा उनकी पार्टी की लोकप्रियता बहुत नीचे चली गई है, पर अपने देश की लोकतांत्रिक परंपराओं का सम्मान करते हुए उन्होंने यह फैसला किया है। ऋषि सुनक ने ऐलान किया कि उन्होंने राजा चार्ल्स तृतीय से बात कर निचले सदन हाउस ऑफ़कॉमन्स को भंग करने का आग्रह किया जिसे उन्होंने मान लिया। अब ब्रिटेन में 4 जुलाई को चुनाव होंगे। अनेक कारणों से अपना पदभार संभालने के समय से ही ऋषि सुनक अनेक समस्याओं में घिरे रहे तथा ब्रिटेन को प्रगति के पथ पर ले जाने में सफल नहीं हुए। वर्तमान समय में देश की आर्थिक स्थिति बहुत खराब है तथा महंगाई चरम पर है। सरकारी क्षेत्र के अनेक विभागों के कामगार अक्सर हड़ताल कर रहे हैं। कंजरवेटिव पार्टी ने ब्रेक्सिट का जो हसीन सपना नागरिकों को दिखाया था, उसके भयानक परिणाम सामने आए हैं। इसी कारण पिछले सालों में कई प्रधानमंत्री बने, पर उनको जल्द ही बदल दिया गया। हालांकि, ऋषि सुनक अपनी पार्टी के लिए संघर्ष कर रहे हैं, पर जनमत सर्वेक्षणों के अनुसार अब लेबर व लिबरल पार्टियों के प्रतिनिधियों के सत्ता में आने की पूरी उम्मीद है।

- **जंग बहादुर सिंह,** जमशेदपुर

इन्वर्टेड ड्यूटी की समस्या

कोई सामान या मशीन बनाने पर कई स्पेयर पार्ट्स को न केवल भारत में बल्कि दुनिया भर के अनेक देशों में आयात करना पड़ता है। ऐसे आयातित सामान पर टैक्स लगता है जिससे निर्मित वस्तुओं की लागत बढ़ जाती है इसके कारण अनेकानेक निर्मित वस्तुएं बाजार में महंगी हो जाती हैं। ऐसे आयातित माल पर-उल्टा शुल्क, यानी इनवर्टेड ड्यूटी लगाया जाता है। केंद्र सरकार से अपेक्षा है कि ऐसे सामानों के उत्पादन के लिए जरूरी स्पेयर पार्ट्स का निर्माण यथासंभव देश में ही किया जाएं। कागज, वाशिंग मशीन, सोलर एनर्जी, वाटर प्यूरीफायर आदि वस्तुओं के निर्माता इनके अनेक स्पेयर पार्ट्स आयात करते है क्योंकि विदेश में ये कम कीमत पर उपलब्ध होते हैं। ऐसे में यदि इन्वर्टेड ड्यूटी समाप्त की जाए या इसे घटाया जाए तो इसका लाभ सीधे उपभोक्ताओं को मिलेगा। हालांकि, देश को विभिन्न प्रकार के हिस्से-पुर्जे बनाने में आत्मनिर्भर बनाना सर्वोत्तम विकल्प है, पर विनिर्माण की जटिलताओं, निरंतर प्रगति कर रही तकनीकों तथा आवश्यकतानसार क्षमताओं के विस्तार को देखते हुए इनके आयात से पूर्ण मुक्ति बहुत कठिन है।

- **दत्तप्रसाद शिरोड़कर,** मुंबई

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से
responsemail.hindipioneer@gmail.com
पर भी भेज सकते हैं।

www.jagran.com
राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
मंगलवार 28 मई, 2024

दैनिक जागरण

दृढ़ता की शक्ति असीम होती है

ईवीएम पर दोषारोपण

चुनाव आयोग को ईवीएम पर एक बार फिर यह स्पष्ट करना पड़ा कि इस मशीन से जुड़ी समस्त जानकारी सभी प्रत्याशियों को दी जाती है और उसकी सुरक्षा के लिए समस्त आवश्यक उपाय भी किए जाते हैं। चुनाव आयोग को ऐसा इसलिए करना पड़ा, क्योंकि कुछ विपक्षी नेता ईवीएम की विश्वसनीयता को लेकर अनावश्यक प्रश्न खड़े कर रहे हैं। पिछले दिनों पूर्व केंद्रीय मंत्री और राज्यसभा सदस्य कपिल सिब्बल ने भी यह कह दिया कि मतगणना के दौरान विपक्षी दलों को सतर्क रहना होगा और साथ ही ईवीएम से जुड़ी जानकारी जुटाकर रखनी होगी। इस तरह की सलाह का कहीं कोई औचित्य नहीं। विपक्षी दलों के रवैये से यह स्पष्ट है कि मतगणना शुरू होने तक कुछ और नेता ईवीएम को लेकर संदेह खड़े कर सकते हैं। ऐसा लगता है कि कुछ दलों ने ईवीएम को कठघरे में खड़ा करने को अपनी राजनीति का अनिवार्य अंग बना लिया है। वे रह-रहकर ईवीएम को लेकर संदेह जताते रहते हैं। हालांकि विपक्षी राजनीतिक दल ईवीएम के खिलाफ कई बार उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटा चुके हैं, लेकिन वहां से नाकामी मिलने के बावजूद वे ईवीएम पर सवाल उठाने से बाज नहीं आ रहे हैं। इसी के साथ वे चुनाव आयोग को भी कठघरे में खड़ा करने में लगे हुए हैं। कभी मतदान के अंतरिम और अंतिम आंकड़ों में अंतर को लेकर अनावश्यक प्रश्न खड़े किए जाते हैं और कभी मतदान के आंकड़े जारी करने में कथित देरी का हवाला देकर चुनाव आयोग को निशाने पर लिया जाता है। इस बार लोकसभा चुनाव में यह काम रह-रहकर होता रहा।

चुनाव शुरू होने के पहले भी सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया गया और यहां तक मांग की गई कि ईवीएम के स्थान पर मतपत्रों से चुनाव कराए जाएं। मतपत्रों से चुनाव कराने के लिए यह दलील भी दी गई कि सभी वीवीपैट का मिलान किया जाए। यह दलील एक तरीके से चुनाव प्रक्रिया को जटिल बनाने की ही कोशिश थी। सुप्रीम कोर्ट ने इस तरह के सभी प्रयासों पर पानी फेर दिया। इसके बाद भी कुछ राजनीतिक दलों को चैन नहीं है। यह मानने के अच्छे भले कारण हैं कि ईवीएम और चुनाव आयोग पर सवाल उठाने का काम जानबूझकर किया जा रहा है ताकि लोगों के मन में संदेह के बीज बोए जा सकें। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि विपक्षी राजनीतिक दल आम चुनावों में अपनी संभावित हार के बहाने तलाश रहे हैं। यदि ऐसा नहीं है तो फिर क्या कारण है कि ईवीएम को लेकर बार-बार वही प्रश्न खड़े किए जाते हैं जिनका उत्तर चुनाव आयोग और साथ ही सुप्रीम कोर्ट की ओर से दिया जा चुका है। चूंकि यह स्पष्ट है कि ईवीएम को बदनाम करने का सिलसिला थमने वाला नहीं इसलिए यह आवश्यक है कि चुनाव आयोग को कुछ ऐसे अधिकार दिए जाएं कि वह ईवीएम पर बेजा सवाल उठाने वालों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई कर सके।

जिम्मेदारी समझें पर्यटक

सुरक्षित जीवन के लिए हमेशा सतर्क रहना आवश्यक होता है। किसी भी स्तर पर बरती गई लापरवाही के परिणाम सुखद नहीं होते। हिमाचल प्रदेश में पर्यटकों के साथ होने वाली दुर्घटनाएं चिंता का विषय है। इससे संबंधित परिवारों को कभी न भरने वाले जख्म मिलते हैं और प्रदेश की छवि भी प्रभावित होती है। मैदानी क्षेत्रों में गर्मी बढ़ने के साथ ही प्रदेश के पर्यटनस्थलों में पर्यटकों की आमद बढ़ी है। प्रदेश में भी इस बार गर्मी बढ़ी है, जिसके प्रभाव से ग्लेशियर भी पिछल रहे हैं। इसके कारण नदी-नालों में पानी का स्तर बढ़ा है। पर्यटक बिना सोचे-समझे नदी-नालों में उतर जाते हैं और दुर्घटना का शिकार होते हैं। ताजा मामला कुल्लू जिले का है, जहां फोटोग्राफी के लिए ब्यास नदी में उतरी युवती की बहने से मृत्यु हो गई जबकि उसे बचाने के लिए नदी में कूदा साथी बह गया। बताया जा रहा है कि लड़कियों की जिद पर ये नदी में उतरे थे। प्रदेश में पर्यटकों के साथ पूर्व में भी इस तरह की कई दुर्घटनाएं हुई हैं। 2014 में लारजी में हैदराबाद के इंजीनियरिंग संस्थान के 24 प्रशिक्षुओं एवं टूरिस्ट गाइड के बहने की घटना को अब तक लोग भूल नहीं पाए हैं। कांगड़ा, ऊना एवं मंडी जिलों में भी ऐसी घटनाएं होती रही हैं। हैरत है कि पूर्व की घटनाओं से कोई सीख नहीं ली जाती और पर्यटक लापरवाही बरतते हैं। पर्यटकों को जिम्मेदारी समझनी होगी और ऐसे स्थानों पर जाने से बचना चाहिए, जहां किसी तरह की दुर्घटना का अंदेशा हो। पर्यटक यहां सुकून के कुछ पल बिताने के लिए आते हैं, इसलिए ऐसा कुछ न करें, जिसके लिए बाद में पछताना पड़े। छुट्टियों का आनंद उठाएं और अच्छी यादें लेकर साथ लौटें। शासन-प्रशासन का भी दायित्व है कि नदी-नालों के किनारे चेतावनी बोर्ड लगाए जाएं ताकि पर्यटक सतर्क रहें।

पर्यटकों को जिम्मेदारी समझनी होगी ताकि प्रदेश में किसी संकट में न फंसें

तीसरे कार्यकाल की प्राथमिकताएं

संदीप घोष

मोदी समझते हैं कि उन्हें जनादेश विकसित भारत के लिए मिल रहा है। ऐसे में उन्हें इस मिशन में तत्काल जुटना होगा

अवधेश राजपूत

लोकसभा चुनाव अब अपने अंतिम पड़ाव पर आ गए हैं। नतीजे तो चार जून को आएंगे, लेकिन व्यापक रूप से अनुमान लगाया जा रहा है कि नरेन्द्र मोदी तीसरी बार देश की सत्ता संभालने जा रहे हैं। ऐसे में चुनावी कोलाहल से इतर हम उनके तीसरे कार्यकाल को लेकर क्या अपेक्षा लगा सकते हैं? चुनावी विमर्श में 'एक देश-एक चुनाव' का मुद्दा भी सामने आया है, जिसके पक्ष में कुछ माहौल भी बना। हालांकि जिस प्रकार स्कूलों में नियमित आधार पर होने वाली नाना प्रकार की परीक्षाएं विद्यार्थियों का आकलन करती हैं, उसी तर्ज पर कुछ समय के अंतराल पर होने वाले चुनाव भी दलों को सतर्क रखते हैं कि वे मतदाताओं को किसी तरह हल्के में नहीं ले सकते। यही भारतीय लोकतंत्र की खूबसूरती है। यह भारत को पश्चिम के उन विकसित देशों से अलग करती है, जहां एक बार चुनाव होने के बाद मतदाताओं की नियति चार-पांच साल के लिए तय हो जाती है। जबकि भारत में लोकसभा चुनाव की खुमारी उतरने से पहले ही मोदी को महाराष्ट्र और हरियाणा जैसे अहम राज्यों के लिए चुनावी तैयारी में जुटना होगा। इसके कुछ महीनों बाद तमिलनाडु, केरल, बंगाल, असम और पुडुचेरी में चुनावी बिगुल बजेगा। इसीलिए भारतीय राजनीति में कभी बोरियत का भाव नहीं आता। क्रिकेट की तरह राजनीति का सीजन भी सदैव गुलजार रहता है। इसलिए मतदाता भी हमेशा अपनी इच्छाओं की सूची के साथ तैयार रहते हैं।

मोदी पहले ही संकेत कर चुके हैं कि तीसरे कार्यकाल में कुछ क्रांतिकारी सुधार उनके रडार पर हैं और उन्हें मूर्त रूप देने की कार्ययोजना भी तैयार है। उनके भीतर का राजनीतिज्ञ भले ही 2047 के भारत के लिए दीर्घकालिक दृष्टिकोण की बात करे, लेकिन उनके अंदर का नेता यह भी जानता है कि लोकसभा चुनाव जीतने की दिशा में उनके लिए कुछ तात्कालिक मोर्चों पर विजय की भी आवश्यकता होगी। राम मंदिर पहले ही बन चुका है। मथुरा का मामला भी सामान्य रूप से सुलझ जाएगा, लेकिन उससे किसी प्रकार के चुनावी लाभांश की उम्मीद कम है। एक्सप्रेसवे जैसे बुनियादी ढांचे में निवेश अब सामान्य माना जाने लगा है तो ऐसे ही मुफ्त राशन हो या ग्रामीण आवास जैसी 'लाभार्थी योजनाएं'। नल से जल, शौचालय, गैस और बिजली की स्थिति भी सुधरी है। असल में आय और रोजगार के मुद्दे ज्वलंत हैं और यदि इनका समाधान नहीं निकाला गया तो भारी खामियाजा भुगतना पड़ सकता है, क्योंकि विपक्ष भी इस मुद्दे को निश्चित रूप से भुनाने का प्रयास करेगा। इसके लिए अर्थव्यवस्था को एक नए आयाम पर ले जाना होगा, लेकिन मुद्दा केवल इतना भर नहीं। ऐसा इसलिए, क्योंकि जब तक निवेश के श्रम गुणांक में तेजी नहीं आती, तब तक ऊंची जीडीपी रोजगार सृजन में अपेक्षित रूप से सहायक नहीं बन पाती। आटोमेशन यानी स्वचालन के दौर में जब कंपनियां कम श्रमिकों से काम चला रही हैं तब रोजगार की चुनौती और कड़ी हो जाती है। नई तकनीक के उभार से कंस्ट्रक्शन जैसी गतिविधियों में कम श्रमिकों की आवश्यकता रह गई है। वहीं, सरकार द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले प्रत्यक्ष रोजगार की अपनी एक सीमा है। लिहाजा इसका कोई 'खटाखट' समाधान नहीं हो सकता।

भारत में पारंपरिक रूप से नौकरियों का आशय 'सरकारी नौकरी' या निजी प्रतिष्ठानों में 'स्थायी नौकरी' से रहा है। हालांकि यह दृष्टिकोण बदला है, जो आने वाले समय में और ज्यादा बदलेगा। युवा पीढ़ी भविष्य को लेकर नई प्रकार की आकांक्षाएं भी कर रही है, लेकिन वे इस परिवर्तन के पड़ाव से तालमेल बिठाने का तरीका नहीं जानते। अन्य एशियाई अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारत कुशल कामकाजी आबादी की भारी समस्या से जूझ रहा है। एक के बाद एक सरकारें यहां तक कि मौजूदा सरकार भी कौशल विकास के मोर्चे पर नाकाम सिद्ध हुई है। आवश्यक कुशल श्रमबल के अभाव में चीन के मुकाबले खुद को एक विनिर्माण महाशक्ति बनाने की हमारी हसरतें पूरी नहीं हो सकतीं। वैश्विक कंपनियां 'चीन प्लस वन' यानी चीन से इतर जो विनिर्माण केंद्र बनाने का विकल्प खोज रही हैं, कुशल कार्यबल की कमी के चलते भारत के लिए वह विकल्प बन पाना मुश्किल होगा।

स्टार्टअप्स की सफलता दर तो कम है, लेकिन सूक्ष्म उद्यमों की हालत भी खतरनाक रूप से पस्त है। 'गिग इकोनमी' एक फैशनेबल शब्द बन गया है। हालांकि इसकी संभावनाओं को आकार लेने में समय लगेगा। अंततः यह मामला 'सब्सिडी' और 'रियायतों' तक सिमट जाता है, जो किसी दीर्घकालिक योजना की स्थिति में ही कोई कारगर भूमिका निभा सकता है। ऐसे में, तात्कालिक दौर पर समाधान ग्रामीण आय को बढ़ाने से निकलेगा। इसके लिए अहम कृषि सुधारों की आवश्यकता होगी, जो केवल केंद्र में मजबूत सरकार ही कर सकती है। यदि मोदी चार सौ से करीब सीटों के साथ जनादेश हासिल करते हैं तो वह ऐसे सुधारों के लिए अपनी 'राजनीतिक पूंजी' दांव पर लगाएंगे, जिन सुधारों को उन्हें पिछले कार्यकाल में ठंडे बस्ते में डालना पड़ा। कड़े सुधारों को आगे बढ़ाने के लिए उन्हें उत्तर प्रदेश से इतर भी 'डबल इंजन' की और सरकार चाहिए होंगी। उत्तर प्रदेश सरीखी शासन व्यवस्था और क्रियान्वयन माडल नए कार्यकाल में मोदी के लिए एक प्रभावी ढांचा हो सकता है। मोदी के हालिया चुनावी भाषणों में योगी आदित्यनाथ के योगदान की खासी प्रशंसा भी सुनाई पड़ी। अब भाजपा को आगामी विधानसभा चुनावों में विंध्य के पार भी अपना विस्तार करना होगा। दक्षिणी राज्यों में उसे अपनी पैठ मजबूत करनी होगी। पंजाब जरूर भाजपा के लिए मुश्किल रण है, लेकिन यदि वहां आप का दायरा सिकुड़ता है तो सहयोगियों के जरिये इस राज्य को साधा जा सकता है। यह मोदी के तीसरे कार्यकाल के लिए निर्णायक होगा।

किसी भी अन्य मोर्चे पर प्रगति के मुकाबले अर्थव्यवस्था मोदी के तीसरे कार्यकाल की धुरी के रूप में दिखाई देगी। बाकी उपलब्धियां बोनस होंगी। मोदी समझते हैं कि उनका जनादेश विकसित भारत के लिए है। यही पहलू भावी पीढ़ी में विश्वगुरु की छवि को स्थापित करेगा। यह उम्मीद की जा सकती है कि चार जून से ही वह इसी मिशन में पूरी तन्मयता से जुट जाएंगे।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

दलगत राजनीति से बचे नई लोकसभा

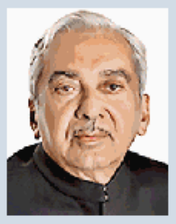

जगमोहन सिंह राजपूत

उम्मीद है पक्ष-विपक्ष के सभी सांसद चुनावों में कही गई बातों को भुलाकर संवाद की सशक्त परंपरा स्थापित करेंगे

नई लोकसभा से अपेक्षाएं। फाइल

इस समय देश और संपूर्ण सरकारी तंत्र 18वीं लोकसभा के गठन के लिए हो रहे आम चुनाव में व्यस्त है। देश में पहला आम चुनाव वर्ष 1952 में हुआ था। ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल जैसे लोग तो आजादी के पहले से भारतीयों के लिए बहुत 'चिंतित' थे कि ये लोग इस लायक नहीं हैं कि अपने देश की सरकार चला सकें। इसके बावजूद विकट परिस्थितियों में स्वतंत्रता प्राप्त कर भारत ने अपने लोकतंत्र को ठोस आधार प्रदान किया। सारे विश्व ने भारत के पहले आम चुनाव की प्रक्रिया की सराहना की। इसके कारण भारत के पहले मुख्य चुनाव आयुक्त सुकुमार सेन को अन्य देशों में भी आमंत्रित किया गया। पहले आम चुनाव ने देश को वैश्विक प्रतिष्ठा दिलाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालांकि तब देश में ऐसे समाजसेवी और राजनेता उपस्थित थे, जो गांधी जी के सिद्धांतों और मूल्यों का व्यावहारिक जीवन में पूरी तरह अनुपालन करते थे। राजनीतिक पटल पर उपस्थित अनेक लोग गांधी से बड़े गांधीवादी थे। पहले आम चुनाव का आयोजन उस भारत ने किया था, जो न केवल विभाजन की भीषण त्रासदी से जूझा था, बल्कि गरीबी, भुखमरी और निरक्षरता की समस्याएं भी अपने चरम पर थीं। उस समय देश में दलबदल नहीं होते थे। लोगों की कारों और घरों में चौंकाने वाली संख्या में नकदी नहीं पाई जाती थी। ऐसा कोई राजनेता तब तक प्रसिद्धि नहीं पा सका था जिसने सत्ता में आकर अपनी संपत्ति को अरबों-खरबों तक बढ़ाकर व्यक्तिगत विकास का उदाहरण प्रस्तुत किया हो। आज देश में किसी से भी ऐसे नाम पूछिए तो बिना हिचक आपको आठ-दस नाम गिना देगा। कुछ अपवाद छोड़कर अब यह अप्रत्याशित स्वीकार्यता लगभग सामान्य हो चुकी है कि जो जीतेगा, समृद्ध होगा, कमाएगा!

देश में अब गिने-चुने लोग ही बचे होंगे जिन्होंने सभी आम चुनावों में भाग लिया हो, लेकिन ऐसे अनेक लोग आज भी मिल जाएंगे, जिन्होंने 14-15 चुनावों में भाग लिया हो। ऐसे लोग भारत में लोकतंत्र की गहरी जड़ों की उपस्थिति को आज भी आशा की किरण मानते हैं, लेकिन इसमें अनेक नकारात्मक प्रवृत्तियों के पनपने से निराश भी हैं। जैसे-चुनाव खर्च में भारी बढ़ोतरी, दलगत राजनीति में लगातार बढ़ती तल्खी, भाषा में घटती शालीनता, उम्मीदवारों के चयन में राजनीतिक दलों के नेताओं की व्यक्तिगत पसंद-नापसंद का हावी होते जाना, जीतने-हारने वाले उम्मीदवारों की पांच साल तक लगातार मतदाता के लिए अनुपलब्धता, चयनित प्रतिनिधियों की साख में गिरावट, अधिकांश की संपत्ति में चौंकाने वाली वृद्धि आदि पक्ष सजग, सतर्क और सक्रिय नागरिक को चिंतित करते हैं। हालांकि इस प्रकार की तमाम समस्याओं के पनपने बावजूद यह भी सही है कि 20वीं सदी में उपनिवेशवाद के चंगुल से मुक्त हुए देशों में सबसे अधिक सराहना आज केवल भारत के लोकतंत्र की ही होती है।

पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने एक बार यह कहा था कि 'चुनावों में अपना पक्ष रखते हुए अनेक बार प्रतिपक्ष की आलोचना में बहुत कुछ ऐसा कहा जाता है, जो सामान्य सकारात्मक संवाद का हिस्सा नहीं बनता है, लेकिन अब पक्ष-प्रतिपक्ष से अनुरोध है कि चुनावों के समय की कहा-सुनी को भुला दिया जाए। अब केवल राष्ट्र को सशक्त करने के लिए सक्रिय संवाद प्रक्रिया स्थापित हो। इस दिशा में बढ़ने में एक पल की भी देरी नहीं होनी चाहिए।' 1999 में अटल जी की सरकार केवल एक वोट से गिर गई थी। तब ओडिशा के तत्कालीन मुख्यमंत्री गिरिधर गमांग ने अपने सांसद पद से त्यागपत्र नहीं दिया था। यदि वह नैतिकता का पालन करते मुख्यमंत्री रहते हुए सांसद के रूप में अटल जी के खिलाफ वोट नहीं देते, तो उनकी सरकार नहीं गिरती। इसके बावजूद भी अटल जी के व्यवहार में किसी के प्रति कोई तल्खी नहीं दिखी। भारत के लोकतंत्र की वह घटना हर सांसद और संवैधानिक पदों पर नियुक्त चयनित प्रतिनिधियों का आज मार्गदर्शन कर सकती है।

दुर्भाग्य से पक्ष-विपक्ष के मध्य तेजी से बढ़ी संवादहीनता के कारण आज जनहित के किसी विषय पर मतैक्य की संभावना नहीं बन पा रही है। ऐसे कार्यक्रम जो गांधी जी के 'पंक्ति के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति' के हित में हैं, सभी का समर्थन नहीं प्राप्त कर पा रहे हैं, क्योंकि दलगत राजनीति यहां भी आड़े आ रही है। अनेक राज्य सरकारें जानबूझकर केंद्रीय योजनाओं के क्रियान्वयन में व्यवधान डाल रही हैं। इसका एक अत्यंत चिंताजनक उदाहरण कुछ राज्य सरकारों की यह घोषणा है कि वे 2020 में निर्मित राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू नहीं करेंगे! यदि ऐसा हुआ तो लाखों विद्यार्थियों को जीवन में जो क्षति होगी, उसकी भरपाई असंभव होगी। नई लोकसभा में अब अपेक्षा है कि पक्ष-विपक्ष के सभी सदस्य एक होकर सतत संवाद की सशक्त परंपरा स्थापित करेंगे और जनहित की नीतियों पर सक्रिय सहयोग का वातावरण निर्मित करेंगे। नई संसद को यह भी याद करना चाहिए कि आज भारत का हर नागरिक विश्व में अपने देश के सम्मान को लेकर गौरवान्वित है। देश के भविष्य को लेकर वह काफी आशावान है। इनकी आशाओं पर खरा उतरने की चुनौती आम चुनावों में सफल होकर प्रधानमंत्री और सांसद बनने वालों के सामने है।

इसमें दो राय नहीं कि सकारात्मक नेतृत्व ही व्यक्ति और राष्ट्र को नई प्रेरणा देता है। ऐसे में नवनिर्वाचित सांसदों को सक्रिय संवाद की परंपरा को पुनर्जीवित करने का प्रयास दलगत राजनीति से ऊपर उठकर अवश्य करना चाहिए। इसी से चयनित देश में प्रतिनिधियों की साख और स्वीकार्यता बढ़ेगी। साथ ही भारत के लोकतंत्र को उसकी अपेक्षित गरिमा मिल सकेगी।

(लेखक शिक्षा, सामाजिक सद्भाव तथा पंथक समरसता के क्षेत्र में कार्यरत हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

आंतरिक जागृति

साधना के मार्ग पर चलकर ज्ञानोदय के लक्ष्य को प्राप्त करना तथा अपने अस्तित्व की अनुभूति करना प्रायः सभी शास्त्रों में मनुष्य जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य माना गया है। बुद्ध शब्द का अर्थ है आंतरिक रूप से जागृत व्यक्ति। संयमित जीवनचर्या, साधना, यम नियम के अनुष्ठान से महात्मा बुद्ध ने इसी आंतरिक बोध को प्राप्त किया था। सांसारिक समस्याओं तथा भौतिक प्रकृति के पाशों में उलझकर मनुष्य आंतरिक आनंद के मार्ग पर चलने में सदैव असमर्थ बना रहता है। मानसिक जगत की संपूर्ण समस्याओं का समाधान इसी भीतर की जागृति तथा आत्मबोध में निहित है। सांसारिक लोभ, प्रलोभनों एवं तृष्णा के चक्रव्यूह से प्रतिपल सचेत रहकर ही बुद्धत्व को प्राप्त किया जा सकता है, परंतु सांसारिक भौतिक पदार्थों में हमारी तीव्र अनुरक्ति, मैं और मेरा का भाव मनुष्य को भीतर के आनंद से सदैव पृथक रखते हैं। मनसा वाचा कर्मणा पवित्रता को आत्मसात करते हुए भीतर के आनंद की ओर बढ़ा जा सकता है। बुद्ध करुणा, दया, प्रेम, वैराग्य तथा एकाग्रता के प्रतीक हैं। अपने जीवन में इन दिव्य मानवीय संवेदनाओं का संचय करना ही बुद्ध का संदेश है।

आध्यात्मिक, दैविक और भौतिक के दुखों से निवृत्ति आंतरिक जागृति से ही संभव हो सकती है। बुद्ध हमें स्वयं के अस्तित्व से जुड़ना सिखाते हैं। स्वयं को जाने बिना बाहर की सारी भागदौड़ व्यर्थ है। बुद्धत्व आत्मिक और मानसिक उन्नति का मार्ग है। जीवन के प्रत्येक कर्म को हम सजगता के साथ विवेकवान होकर तथा आंतरिक रूप से जागृत होकर करें। बुद्ध जैसी साधना निष्ठ विभूतियां मनुष्य को आध्यात्मिक आनंद की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। बुद्धत्व के अनुसरण से ही संपूर्णता का मार्ग प्रशस्त होता है। इसी आंतरिक संपूर्णता से मनुष्य का जीवन आध्यात्मिक उल्लास और आनंद से परिपूर्ण होता है।

आचार्य दीप चंद भारद्वाज

सड़क सुरक्षा की जिम्मेदारी

रंजना मिश्रा

अभिभावकों, शिक्षकों, पुलिस तथा सरकार को मिलकर काम करना होगा, ताकि सड़कों को सभी के लिए सुरक्षित बनाया जा सके

पुणे में हुए सड़क हादसे ने एक बार फिर नाबालिगों द्वारा वाहन चलाने की गंभीर समस्या को उजागर किया है। नाबालिगों द्वारा वाहन चलाने के कारण होने वाली दुर्घटनाएं भारत में बढ़ रही हैं। नाबालिगों द्वारा वाहन चलाने से सड़क दुर्घटनाओं का खतरा बढ़ जाता है। ये दुर्घटनाएं अक्सर गंभीर होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु, चोट और स्थायी विकलांगता हो सकती है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों के अनुसार, 2021 में सड़क दुर्घटनाओं में मारे गए लोगों में 18 वर्ष से कम आयु के 11,717 लोग थे।

कई बार अभिभावक अपने नाबालिग बच्चों को वाहन चलाने की अनुमति दे देते हैं, भले ही उनके पास वैध लाइसेंस न हो या वे सड़क सुरक्षा नियमों का पालन करने के लिए पर्याप्त रूप से परिपक्व न हों। नाबालिगों सड़क सुरक्षा नियमों और खतरों से अनजान होते हैं। वे तेज गति से गाड़ी चलाने, स्टंट करने और लापरवाही से गाड़ी चलाने जैसे जोखिम भरे काम करते हैं। शराब या ड्रग्स के प्रभाव में खतरे की आशंका और अधिक बढ़ जाती है, जिससे इस प्रकार की दुर्घटनाएं होती हैं। इसलिए नशे की हालत में गाड़ी चलाने पर कड़े प्रतिबंध और अधिक से अधिक सजा होनी चाहिए। देखा गया है कि नाबालिगों द्वारा वाहन चलाने पर प्रतिबंध लगाने वाले कानूनों को अक्सर सख्ती से लागू नहीं किया जाता है। पुलिस नाबालिगों को चेक करने और उन पर जुर्माना लगाने में विफल रहती है। इस प्रकार की दुर्घटनाएं हमारे देश में एक भीषण समस्या बनती जा रही हैं। अभिभावकों को यह समझना होगा कि नाबालिग बच्चों को वाहन चलाने की अनुमति देना कितना खतरनाक हो सकता है। उन्हें अपने बच्चों को सड़क सुरक्षा नियमों का पालन करने और जिम्मेदारी से गाड़ी चलाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

स्कूलों में सड़क सुरक्षा शिक्षा को अनिवार्य किया जाना चाहिए। नाबालिगों को सड़क नियमों, खतरों और जिम्मेदारी से गाड़ी चलाने के तरीके के बारे में भी शिक्षित किया जाना चाहिए। पुलिस को भी नाबालिगों को चेक करने और उन पर जुर्माना लगाने में अधिक सक्रिय होना चाहिए। इससे नाबालिगों और उनके अभिभावकों को डर लगेगा और वे इस खतरनाक व्यवहार से बचेंगे। यह एक सामूहिक प्रयास है। इसमें अभिभावकों, शिक्षकों, पुलिस और सरकार को मिलकर काम करना होगा, ताकि सड़कों को सभी के लिए सुरक्षित बनाया जा सके। नाबालिगों को केवल अपराधी नहीं ठहराया जा सकता, उन्हें उचित मार्गदर्शन और शिक्षा प्रदान करना भी हमारी जिम्मेदारी है। सड़क सुरक्षा हम सबकी जिम्मेदारी है और हमें इसे बखूबी निभाना चाहिए।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

कैसे घटे अदालतों का बोझ

'जजों की छुट्टियों पर बेजा बहस' शीर्षक से लिखे आलेख में डा. ब्रजेश कुमार तिवारी ने ठीक कहा है कि कानूनी संस्कृति में व्यापक बदलाव के बिना केवल जजों की छुट्टियों में कटौती करने से कुछ हासिल नहीं होने वाला। देखा जाए तो भारत में न्यायिक प्रक्रिया की मूल समस्या विभिन्न अदालतों में अपार मामलों का लंबित रहना है। इसका हल निम्न सुझावों को अपनाकर किया जा सकता है। सबसे पहले तो देश में समुचित संख्या में न्यायाधीश होने चाहिए। विशेष परिस्थितियों को छोड़कर पुराने मामलों की एक निश्चित संख्या लंबित रहने पर जजों को नए केस लेने का अधिकार नहीं होना चाहिए। पुराने केस की अग्रिम तिथि यदि न्यायाधीश ने स्वयं नहीं दी हो तो कंप्यूटर प्रोग्राम के अनुसार अगली तिथि की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रति वर्ष न्यायालयों द्वारा किए गए कार्यों की समीक्षा सर्वोच्च न्यायालय की ओर से गठित समिति द्वारा की जानी चाहिए। जिस सेवा प्रदाता या वादी के कारण वाद उत्पन्न हुआ, न्यायिक निर्णय में उसे भी यथोचित सजा दी जानी चाहिए। मामलों को वर्गीकृत कर तदनुसार निर्णय दिए जाने की एक निश्चित अवधि निर्धारित की जानी चाहिए। इन सब उपायों को अपनाते समय हमें भारत की विविधता, विशालता और जनसंख्या को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है।

डा. पीएस श्रीवास्तव, लखनऊ

जिंदगियां निगलती लापरवाही की आग

गुजरात में राजकोट के गेमिंग जोन और दिल्ली के बेबी केयर सेंटर में हुए अग्निकांड ने पूरे देश को झंकझोर के रख दिया है। गेमिंग जोन में बच्चों सहित 28 और बेबी केयर सेंटर में छह नवजात बच्चे प्रशासन और रसूखदार लोगों की लापरवाही की भेंट चढ़ गए। राजकोट का गेमिंग सेंटर एक अनाधिकृत परिसर में बिना किसी फायर सेफ्टी एनओसी के पिछले चार साल से धड़ल्ले से चल रहा था और वहां का नगर प्रशासन आंख बंद किए ऐसे ही किसी बड़े हादसे का इंतजार कर रहा था। वहीं जांच में पता चला है कि बेबी केयर सेंटर के ग्राउंड फ्लोर में अवैध तरीके से आक्सीजन सिलेंडर की रिफिलिंग होती थी, जिसकी शिकायत पुलिस और नगर निगम में की गई थी, लेकिन कोई सुनवाई नहीं हुई। इस हास्पिटल में न तो आग बुझाने के इंतजाम थे और न ही कोई इमरजेंसी एग्जिट था। दिल्ली प्रशासन की लापरवाही का अंदाजा आप इस बात से भी लगा सकते हैं की बीएएमएस डिग्री धारक डाक्टर को दिल्ली सरकार के तहत आने वाले डीजीएचएस ने बच्चों के हास्पिटल का लाइसेंस दिया था। बता दें कि यह डिग्री बच्चों के इलाज के लिए मान्य नहीं है। ये सारे सबूत नगर प्रशासन द्वारा की गई लापरवाही का कच्चा चिट्ठा खोलने के लिए पर्याप्त हैं, पर इन सबके बावजूद देश की लचर कानून व्यवस्था के चलते इन मासूम जिंदगियों को इंसाफ मिलने में सालों लग जाएंगे। ऐसे भयावह हादसों से बचने के लिए और सोते हुए नगर प्रशासन को जगाने के लिए सरकार को कठोर कदम उठाने चाहिए।

discoversonal@gmail.com

मेलबाक्स

सामूहिक प्रयासों से बनेगा विकसित राष्ट्र

भारत 23 वर्षों की अपनी यात्रा में परिवर्तन और अवसरों का लाभ उठाकर व्यापक सुधारों, समावेशी वृद्धि और जनसांख्यिकी एवं आर्थिक संभावनाओं का लाभ उठाकर एक समृद्ध एवं विकसित राष्ट्र का सपना साकार कर सकता है। भारत के इतिहास में यह वह दौर है, जब देश एक बड़ी छलांग लगाने जा रहा है। हमारे आसपास ऐसे कई देशों के उदाहरण हैं, जिन्होंने एक निश्चित समय में इसी तरह की छलांग लगाकर खुद को विकसित किया है। लोगों में कर्तव्य का इतना अधिक बोध होना चाहिए कि वे समय पर आफिस पहुंचकर अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए काम करने के लिए आगे बढ़ें। यहां जो भी प्रोडक्ट बनता है, उसकी क्वालिटी इतनी अच्छी होनी चाहिए कि उस पर मेड इन इंडिया देखकर खरीदने वाले का गौरव बढ़ जाए। जब देश का हर नागरिक, चाहे वह कोई भी भूमिका निभाए, अपने कर्तव्यों का पालन करना शुरू करेगा, तो देश भी आगे बढ़ेगा।

युगल किशोर राही, ग्रेटर नोएडा

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

2.11 लाख करोड़ रुपये का लाभांश दिया है भारतीय रिजर्व बैंक ने केंद्र सरकार को, जिससे सरकार को अपनी वित्तीय स्थिति सुदृढ़ करने में मदद मिलेगी।

आजकल

कौन भुगतेगा चुनावी गारंटी का खामियाजा

लोकसभा चुनाव अपने अंतिम चरण में है। हर वोट की महत्ता समझते हुए लगभग सभी राजनीतिक दल हर वर्ग के मतदाताओं को लुभाने की कवायद में लगे हैं। गारंटियों के संदर्भ में हर राजनीतिक दल दूसरे से बढ़-चढ़कर घोषणाएं कर रहा है। लेकिन वोटरों को लुभाने और येन-केन-प्रकारेण सत्ता हासिल करने की कवायद में देश के कई राज्य पहले से ही कर्ज के बोझ में दबते जा रहे हैं और इस कारण जहां वे एक ओर अपने वादे पूरी तरह निभा पाने में असफल हो रहे हैं, वहीं उन राज्यों का विकास कार्य तथा आवश्यक सरकारी कामकाज तक प्रभावित हो रहा है

मतदाताओं को लुभाने के लिए अनेक राजनीतिक दल करते हैं मुफ्त में कई प्रकार की सुविधाएं देने का वादा। फाइल

डा. अश्विनी महाजन
प्रोफेसर, पीजीडीएवी कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

राजनीतिक दल अपने चुनाव घोषणा पत्र में अपनी प्रस्तावित नीतियों संबंधी घोषणाएं करते रहे हैं, लेकिन पिछले लगभग डेढ़-दो दशक से राजनीतिक दल वोटरों को लुभाने के लिए मुफ्त स्कीमों संबंधी घोषणाएं करने लगे हैं। कभी किसानों के लिए ऋण माफी की घोषणा तो कभी युवाओं को बेरोजगारी भत्ता, तो कभी सरकारी नौकरियों का वादा आदि से शुरूआत हुई। लेकिन अब ये वादे, गारंटी का रूप ले चुके हैं। अब मुफ्त बिजली, पानी और महिलाओं के लिए मुफ्त यात्रा की गारंटी सबसे लुभावनी मुफ्तखोरी की स्कीमें बन चुकी हैं। हालांकि कुछ स्कीमों के द्वारा जनकल्याण की भावना को समझा जा सकता है, जैसे लिंग असंतुलन को दूर करने और महिलाओं में साक्षरता और शिक्षा को बढ़ाने हेतु योजना, किसानों की हालत सुधारने के लिए सस्ते इनपुट या उनकी उपज का अधिक मूल्य देने की गारंटी आदि कुछ ऐसी कल्याणकारी योजनाएं हैं, जिन्हें न्यायसंगत कहा जा सकता है। लेकिन सभी लोगों को मुफ्त बिजली, पानी या यात्रा के फलस्वरूप सरकारों के बजट बिगड़ सकते हैं या सरकारों पर कर्ज बढ़ सकता है।

अनेक राज्य हैं प्रभावित : पंजाब में चुनावों के दौरान आम आदमी पार्टी ने मुफ्त बिजली समेत कई घोषणाएं की। आम आदमी पार्टी की सरकार बनने के बाद इनमें से कुछ घोषणाओं पर अमल हुआ, लेकिन आज स्थिति यह है कि सरकार पर कर्ज का बोझ निरंतर बढ़ तो रहा ही है, उससे भी ज्यादा कर्ज लेने की कवायद चल रही है और केंद्र सरकार पर भी आरोप लगाए जा रहे हैं कि वे राज्य को पैसा नहीं दे रही। जबकि वास्तविकता यह है कि राज्य सरकारें वोट बटोरने की कवायद में गैर जिम्मेदारी से मुफ्तखोरी की स्कीमें चला रही हैं। इसी प्रकार आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, राजस्थान, बंगाल, बिहार, झारखंड आदि में कर्ज का बोझ बढ़ता जा रहा है। उधर केंद्र सरकार राज्यों को और अधिक कर्ज लेने देने के पक्ष में नहीं है, क्योंकि यह 'एफआरबीएम अधिनियम' के खिलाफ है।

जिन राज्यों पर मुफ्तखोरी की स्कीमों के कारण कर्ज बढ़ रहा है, वे अपने-अपने राज्य में आवश्यक खर्च करने में सक्षम नहीं हैं। पंजाब में उद्योगों को बिजली इसलिए महंगी मिल रही है, क्योंकि पंजाब सरकार लगभग 60 लाख लोगों को मुफ्त बिजली दे रही है। पंजाब में इंफ्रास्ट्रक्चर बुरी तरह से प्रभावित हो रहा है। लंबे समय से विभिन्न सरकारों द्वारा दी जा रही मुफ्तखोरी स्कीमों के चलते पंजाब, जो एक समय देश का सबसे अधिक प्रति व्यक्ति आय वाला राज्य था, वह 19वें स्थान पर खिसक चुका है। लगभग इसी प्रकार के हालात कर्ज में डूबे अन्य राज्यों में भी है।

वर्ष 2024 के आम चुनावों में अब तो बात हर साल प्रत्येक लाभार्थी परिवार को एक लाख रुपये देने तक आ गई है। अगर ऐसी पार्टी सत्ता में आती है तो ऐसी योजना का क्रियान्वयन भयावह हो सकता है। गौरतलब है कि 31 मार्च 2023 तक भारत में सरकारों (केंद्र और राज्य) पर कुल कर्ज (उनके द्वारा दी गई गारंटी सहित) 231.7 लाख करोड़ रुपये था, जो मौजूदा कीमतों पर जीडीपी का 85.1 प्रतिशत था। इसमें से केंद्र सरकार का कुल कर्ज जीडीपी के 57.1 प्रतिशत के बराबर है और बाकी राज्य सरकारों (जीडीपी का लगभग 28 प्रतिशत) का है। हमें यह जानना होगा कि राज्य सरकारों के कर्ज का अनुपात पिछले कुछ वर्षों में तेजी से बढ़ रहा है। राज्य सरकारों की गैर जिम्मेदाराना मुफ्तखोरी, सरकारों के समग्र ऋण में वृद्धि के कारण देश को परेशान कर रही है, और समग्र ऋण में यह वृद्धि के कारण अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा रेटिंग घटाने का कारण बन रही है।

राजकोष का संकट : समझना होगा कि केंद्र सरकार हो अथवा राज्य सरकारें, किसी भी सरकार के पास खर्च करने हेतु असीमित राजकोष नहीं होता। राजकोष मौटे तौर पर देश के लोगों की कर देने की क्षमता पर निर्भर करता है। लंबे समय से हमारा कर-जीडीपी अनुपात 17 प्रतिशत पर बना हुआ है, जिसमें से केंद्र सरकार द्वारा लगाए गए करों को अनुपात जीडीपी के लगभग 10 प्रतिशत के आसपास बना हुआ है। वर्ष 2024-25 में करों की कुल प्राप्ति (निवल) का अनुमान मात्र 26.02 लाख करोड़ रुपये आंका गया है। ऐसे में कुल बजट जो, 47.66 लाख करोड़ रुपये का है, उसमें 26.02 लाख करोड़ रुपये की कर प्राप्तियों और चार लाख करोड़ रुपये की गैर कर राजस्व प्राप्तियों के बाद शेष राजकोषीय घाटा, जो लगभग 16.85 लाख करोड़ रुपये है, जिसमें से अधिकांश पैसा उधार से प्राप्त होगा। यानी ज्यादा खर्च करने के लिए उधार के अलावा और कोई रास्ता नहीं है।

यह भी समझना होगा कि अर्थशास्त्रियों का इस बारे में मतैक्य है कि कुल बजट के 75 प्रतिशत से अधिक का खर्च पूर्व निर्धारित मदों पर हो जाता है, जिसमें पूर्व में लिए गए ऋणों के मूल और ब्याज की अदायगी, वेतन और पेंशन, प्रतिरक्षा खर्च, कानून और व्यवस्था, अंतरराष्ट्रीय संबंध, रखरखाव समेत अन्य जरूरी खर्च शामिल हैं। इसके बाद जो बचता है, उसे इंफ्रास्ट्रक्चर, कल्याणकारी योजनाओं, औद्योगिक विकास आदि के कल्याण के लिए खर्च किया जाता है।

जाहिर है कि यदि कांग्रेस द्वारा हाल ही में दी गई हर गरीब परिवार की चिह्नित महिला को एक लाख रुपये देने की गारंटी को यदि लागू करना पड़ा तो उसका असर यह होगा कि कम से कम 10-12 लाख करोड़ रुपये उसके लिए उपलब्ध कराना होगा। ऐसे में उसका क्या असर होगा, यह समझा जा सकता है। पहला, सीमित कराधान के चलते अपने निश्चित बजट में सबसे पहली कटौती पूंजीगत व्यय की होगी। यानी इंफ्रास्ट्रक्चर, औद्योगिक विकास, कृषि विकास और अन्य पूंजीगत व्यय को कम किया जाएगा। यदि इतिहास में देखें तो यूपीए के 10 वर्षों में कुल पूंजीगत व्यय वर्ष 2003-04 में 1.09 लाख करोड़ रुपये से बढ़कर वर्ष 2013-14 तक 1.88 लाख करोड़ रुपये तक ही पहुंचा यानी 72 प्रतिशत की वृद्धि। जबकि एनडीए यानी नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री कार्यकाल में यह 2023-24 तक 10.01 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच गया, यानी 433 प्रतिशत की वृद्धि। समझा जा सकता है कि यदि एक लाख रुपये प्रति वर्ष चिह्नित परिवारों को देना लागू किया गया तो पुनः हमें पूंजीगत खर्च में कटौती करनी पड़ेगी। सबसे पहले इसका असर यह होगा कि हमारे तमाम विकासगत खर्च कम हो जाएंगे और विकास ठप हो जाएगा, जिससे भविष्य में टैक्स की प्राप्तियां भी कम हो जाएगी।

दूसरा असर यह होगा कि गारंटी को लागू करने के लिए सरकार को कर्ज लेना पड़ेगा, जिसका असर यह होगा कि भविष्य में ब्याज की अदायगी बढ़ेगी और भविष्य का बजट भी बिगड़ेगा। तीसरा, घाटे के बजट बनाने होंगे, एफआरबीएम को तिलांजलि देनी पड़ेगी और महंगाई बढ़ेगी। चौथा, गरीबों के लिए घर, पेयजल आदि कार्यक्रम भी प्रभावित होंगे। पांचवां, सरकार पर कर्ज बढ़ने से रेटिंग एजेंसियां, भारत की रेटिंग को कम करेंगी, जिसका असर हमारे भविष्य में विदेशी निवेश, ब्याज दर आदि पर पड़ेगा, जिससे हमारा विकास ठप हो सकता है। समझना होगा कि अर्जेंटीना, वेनेजुएला जैसे देशों ने भी इस प्रकार के कार्यक्रम चलाए थे और उसका नतीजा यह हुआ कि आज ये देश भयंकर कर्ज, महंगाई और आर्थिक बदहाली से गुजर रहे हैं।

सरकार के कामकाज के आधार पर मतदान

प्रो. महेश चंद गुप्ता

हर सरकार की कुछ खूबियां होती हैं तो कुछ कमियां होना भी स्वाभाविक है। परंतु मोदी सरकार का एक दशक का बेदाग कार्यकाल सराहनीय है। लगभग 25 करोड़ लोगों को गरीबी से बाहर निकाला गया है, विभिन्न अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों ने इस बात पर मुहर लगाई है। देश को महाघोटालों और आतंक से मुक्ति मिली है। गरीबों का जीवन बेहतर करने की दिशा में कदम बढ़े हैं। एक ओर जहां विपक्षी दलों के नेता अपने परिवार के विकास पर ध्यान देते रहे हैं, वहीं दूसरी ओर मोदी ने 'सबका साथ, सबका विश्वास, सबका विकास' के तहत देश के 140 करोड़ लोगों का ख्याल रखा है। मोदी ने शासन व्यवस्था में परिवर्तन की अलख जगाई, उससे समावेशी, विकासोन्मुख और भ्रष्टाचार मुक्त शासन की ओर कदम बढ़ाना संभव हुआ है। मोदी ने देश में सांस्कृतिक विकास और पर्यटन विकास को पंख लगा दिए हैं। ऊर्जा, विदेश नीति, सुरक्षा, चिकित्सा, शिक्षा, आर्थिक उन्नति, गरीब कल्याण, महिला उत्थान समेत हर वर्ग के लिए समर्पित भाव से काम किया गया है।

पिछले दस वर्षों में मोदी ने लक्ष्यबद्ध तरीके से काम किया है, जिससे आम आदमी की हालत सुधरी है। देश में प्रति व्यक्ति आय बढ़ी है। विपक्षी दलों की तरह मोदी गरीबी हटाओ का नारा नहीं देते, बल्कि वह गरीब की आमदनी बढ़ाने पर जोर दे रहे हैं। मोदी के 'मेक इन इंडिया' कार्यक्रम ने देश को तरक्की की सीढ़ियों पर चढ़ा दिया है। मोदी ने दस वर्षों में जो काम किया है, उसकी वजह से तो लोग लगातार तीसरी बार मोदी को प्रधानमंत्री देखना चाहते ही हैं, इसके साथ-साथ लोगों को यह भी विश्वास है कि आने वाले वर्षों में मोदी के नेतृत्व में ही देश आगे बढ़ सकता है। लोग मानते हैं कि आने वाले समय में मोदी के नेतृत्व में देश न केवल विकास की ओर बढ़ेगा, बल्कि विभिन्न चुनौतियों का सामना करने में भी समर्थ हो जाएगा। मोदी काल में राष्ट्रवाद की भावना का विस्तार विलक्षण उदाहरण है। माना जा रहा है कि तीसरे कार्यकाल में मोदी न्यायिक सुधारों, समान नागरिक संहिता, परिसीमन और एक देश एक चुनाव, भ्रष्टाचार के खिलाफ निर्णायक लड़ाई, सत्तर वर्ष से ज्यादा उम्र वाले बुजुर्गों के लिए निशुल्क चिकित्सा तथा विनिर्माण क्षेत्र को मजबूत बनाने के लिए प्राथमिकता से काम करेंगे। यकीनन, इस कवायद के अच्छे परिणाम सामने आएंगे। देश आगे बढ़ेगा, देशवासी खुशहाल होंगे और समूचे विश्व में भारत की साख में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी।

(लेखक दिल्ली विवि में प्रोफेसर रहे हैं)

खरी-खरी

उनका वाला उल्लू...

इंद्रजीत कौर

मनसुखलाल जी रोज की तरह आज भी मेरे घर आए। इससे पहले कि मैं कुछ बोलती उनके हाव-भाव को देख मैं चुप ही रही। मुझे चुप देख उन्होंने कहा, 'पता है, कल मैंने एक उल्लू देखा।'

मुझे आश्चर्य हुआ, मैंने ईमानदारी की तरह उल्लू का नाम ही सुना था, कभी देख नहीं पाई थी। मेरा मन भी हांव-हांव करने लगा और पूछ बैठी, 'देखने में कैसा लगता है?'

मनसुखलाल ने मेरी उत्सुकता को महंगाई की तरह बढ़ता पाया। बोले, 'पहले एक गिलास पानी लाओ।'

मैं अंदर जा कर गिलास में पानी भर ही रही थी कि महाशय किचन तक आ पहुंचे। किसी प्रकार से उन्हें ड्राइंग रूम में बिठाया और अपना प्रश्न दोहराया। उनका जबाब था, 'देखो, उल्लू का रंग काला होता है। अक्सर एक शाख पर एक ही उल्लू बैठता है। इस पर लक्ष्मी देवी भी सवार रहती हैं। यह अंधेरे में ठीक वैसे ही देख पाता है जैसे हम उजाले में।'

मनसुखलाल इतना कहकर चुप हो गए। हमें उनकी बातें चुनावी भाषण जैसी लगी। कुछ भी नया नहीं था। मैंने अपना ज्ञान बघारा, 'भाई, उल्लू तो हमने भी देखे हैं, पर आप वाले उल्लू से वो बढ़कर हैं।'

'वह कैसे? उसका रूप-रंग, चाल-ढाल आदि तो बताओ।'

'हमारे वाले उल्लू के शरीर के रंग की कोई गारंटी नहीं है, पर दिल हमेशा ही काला होता है, यहां तक कि उसके कारनामे और पैसे भी काले होते हैं। हमारा उल्लू अच्छे खासे उजाले को अंधेरे में बदल देता है। उसके कारनामे अंधेरे में शुरू होते हैं और अंधेरे में खत्म हो जाते हैं। आप वाले उल्लू की सवारी तो लक्ष्मीदेवी हैं, पर हमारे उल्लू की न पूछो, उसे जहां लक्ष्मी दिखती है, उस पर सवार हो जाता है। तुम्हारा वाला उल्लू शांति से अपनी साख पर अकेला बैठ जाता है, पर हमारा वाला तो दंगे-फसाद, भ्रष्टाचार, अपराध, रिश्वतखोरी आदि के बिना शाख ही नहीं पकड़ता। वह शक्ति के साख पर अकेले बैठे रहना चाहता है, पर आसपास चमचों की भीड़ अवश्य देखना चाहता है।'

बात खत्म होते ही मनसुखलाल का चेहरा हारी हुई पार्टी की तरह मुरझा गया। उन्हें अपना वाला उल्लू छोटा और भौला लग रहा था।

पोस्ट

यूट्यूब पर कुछ स्वयंभू चुनावी विश्लेषकों से बस इतना ही कहना है कि चुनावी आकलन जमकर करो, लेकिन यह गुंजाइश रहे कि चार जून को जब रिजल्ट आ जाए तो शर्मिंदा न हों।

कमलेश सिंह@kamleshksingh

एसआरएच की टीम ट्रेविस हेड और अभिषेक शर्मा पर हद से ज्यादा निर्भर रही। फाइनल में इनके जल्दी आउट होते ही पूरी टीम बिखर गई। स्टार्क के झटकों से प्रतिद्वंद्वी टीम उबर ही नहीं पाई। केकेआर में कई मैच विनर हैं। इतना एकतरफा फाइनल आइपीएल के इतिहास में कभी नहीं हुआ है। केकेआर शुरुआत से ही बढ़िया खेली, वह खिताब की हकदार थी।

सुशील दोशी@RealSushilDoshi

हिंदू धर्म, सनातन संस्कृति की आलोचना इस बात के लिए की जाती है कि यहां जातिवाद है और जाति व्यवस्था के कारण समाज का एक बड़ा हिस्सा पिछड़ा-गरीब है। इसलिए आरक्षण की व्यवस्था हुई, लेकिन जिस इस्लाम में जाति न होने की बात है, उसे मानने वालों के लिए जातीय आधार पर आरक्षण कैसे हुआ?

ब्रजेश कुमार सिंह@brajeshksingh

जागरण जनमत

कल का परिणाम

राजकोट अग्निकांड जैसी त्रासदी विकसित भारत बनने की ओर बढ़ने के हमारे दावे को कमजोर करती है?

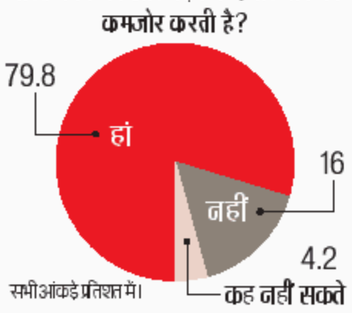

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या सेनाध्यक्ष को एक माह के सेवा विस्तार का फैसला सही है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

सीएम श्री नीतीश की जाती फिसल जुबान,
क्या बोलेंगे ये नहीं हो पाता अनुमान।
हो पाता अनुमान उम्र जब लगती ढलने,
पटरी छोड़ जुबान लगे तब रोज फिसलने।
उनका आशिर्वाद सुनें अचरज से पीएम,
जिसमें रहे बनाय एक पीएम को सीएम!

– ओमप्रकाश तिवारी

बंगाल डायरी

ओबीसी के नाम पर आरक्षण का खेल

जयकृष्ण वाजपेयी
राज्य ब्यूरो प्रमुख, बंगाल

हमारे देश में जाति और धर्म के नाम पर राजनीति नई नहीं है। पिछले कई माह से कांग्रेस नेता राहुल गांधी से लेकर भाजपा विरोधी अन्य कई दलों के नेता अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) के नाम पर चुनावी फसल काटने के लिए जातिगत गणना व जातियों का एक्स-रे कराने की बातें करते आ रहे हैं। परंतु ओबीसी के नाम पर आरक्षण और तुष्टीकरण का जो खेल चल रहा है, वह एक-एक कर सामने आ रहा है। हमारे संविधान के मुताबिक धर्म के नाम पर किसी को आरक्षण नहीं दिया जा सकता है, इसके बावजूद आरक्षण का खेल चल रहा है।

बीते सप्ताह कलकत्ता हाई कोर्ट ने बंगाल में 37 वर्गों को दिए गए ओबीसी आरक्षण रद करते हुए इस प्रक्रिया को असंवैधानिक करार दिया। दो न्यायाधीशों की खंडपीठ ने कहा, 'अदालत का मानना है कि मुसलमानों के 77 वर्गों को पिछड़ों के तौर पर चुना जाना पूरे मुस्लिम समुदाय का अपमान है। अदालत का मन इस संदेह से मुक्त नहीं है कि राजनीतिक लाभ के लिए उक्त समुदाय (मुसलमान) को वस्तु समझा गया। चुनावी लाभ के लिए मुस्लिम समुदाय के वर्गों को ओबीसी के रूप में मान्यता देना उन्हें संबंधित राजनीतिक प्रतिष्ठान की दया पर छोड़ देगा और इससे वे अन्य अधिकारों से वंचित रह सकते हैं, इसलिए ऐसा आरक्षण लोकतंत्र और समग्र रूप से भारत के संविधान का भी अपमान है।'

हाई कोर्ट की यह टिप्पणी बता रही है कि पंथनिरपेक्ष होने का दंभ भरने वाली पार्टियां वोट बैंक के लिए किस तरह की राजनीति कर रही हैं। हाई कोर्ट ने बंगाल में तृणमूल कांग्रेस के शासनकाल में जारी ओबीसी प्रमाणपत्र रद कर दिए हैं। उसके बाद से यह एक बड़ा मुद्दा बना चुका है और राजस्थान, उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में भी वहां की सरकारें इस मामले में जांच की बात कह रही है। जब बंगाल में दो चरणों में 17 सीटों का मतदान बाकी था, उसी समय यह फैसला आया है। हाई कोर्ट ने जिस तरह से 2010 के बाद जारी पांच लाख से अधिक ओबीसी प्रमाणपत्र को रद किया है, इससे राज्य ही नहीं, पूरे देश की राजनीति में आरक्षण पर एक बार फिर बहस छिड़ गई है। हाई कोर्ट ने 2012 में राज्य की ममता बनर्जी सरकार द्वारा 77 जातियों को पिछड़ा वर्ग में शामिल करने संबंधी कानून को ही अवैध घोषित कर दिया है। भारत सरकार के प्रेस इन्फोर्मेशन ब्यूरो (पीआइबी) के आंकड़ों के अनुसार, बंगाल में पिछड़ी जातियों की कुल संख्या 179 है, जिनमें मुस्लिम जातियों की संख्या 118 है। वहीं हिंदू जातियों की संख्या केवल 61 है। ये आंकड़े बता रहे हैं कि किस तरह की तुष्टीकरण और वोट बैंक की राजनीति होती है। मुख्यमंत्री ममता बनर्जी स्वयं रविवार को कहा कि उन्होंने सात से 17 प्रतिशत आरक्षण कर 97 प्रतिशत मुस्लिम समुदाय को दायरे में ला दिया है।

कलकत्ता हाई कोर्ट की इमारत। फाइल

दरअसल, बंगाल में ओबीसी आरक्षण की कहानी पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के कार्यकाल में गठित सच्चर कमेटी की रिपोर्ट से शुरू होती है। उस रिपोर्ट में देश में मुस्लिम समुदाय की स्थिति के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई थी। रिपोर्ट में कहा गया था कि बंगाल सरकार के कर्मचारियों में केवल 3.5 प्रतिशत ही मुस्लिम हैं। इसी को आधार बनाकर 2010 में बंगाल की तत्कालीन वाममोर्चा सरकार ने मुस्लिम समुदाय के लिए 10 प्रतिशत आरक्षण की घोषणा कर दी थी और राज्य पिछड़ा आयोग ने 42 जातियों को इसमें शामिल करने की संस्तुति की थी, जिसमें मुस्लिमों की 41 जातियां थीं। इसी के साथ ओबीसी आरक्षण सात प्रतिशत से बढ़ाकर 17 प्रतिशत कर दिया गया था।

दरअसल, बंगाल में ओबीसी आरक्षण को भी दो वर्गों 'ए' और 'बी' में बांट दिया गया। 10 प्रतिशत आरक्षण अति पिछड़ा वर्ग और सात प्रतिशत पिछड़ा वर्ग को दिया गया। 10 प्रतिशत वाले आरक्षण में अधिकतर जातियां मुस्लिम समुदाय की हैं। दूसरे वर्ग को सात प्रतिशत आरक्षण मिला, जिसमें हिंदू-मुस्लिम दोनों समुदायों की जातियां हैं। न्यायमूर्ति तपोब्रत चक्रवर्ती और न्यायमूर्ति राजशेखर मंथा की खंडपीठ ने 211 पन्नों के अपने आदेश में स्पष्ट किया कि 2010 से पहले ओबीसी के 66 वर्गों को वर्गीकृत करने वाले राज्य सरकार के कार्यकारी आदेशों में हस्तक्षेप नहीं किया गया क्योंकि इन्हें याचिकाओं में चुनौती नहीं दी गई थी। अदालत ने आयोग से परामर्श न लेने के आधार पर सितंबर, 2010 के एक कार्यकारी आदेश को रद कर दिया, जिसके जरिए ओबीसी आरक्षण सात प्रतिशत से बढ़ाकर 17 प्रतिशत किया गया था। बंगाल में एससी, एसटी एवं ओबीसी के कुल आरक्षण का प्रतिशत 45 है, जिसमें एससी को 22 प्रतिशत, एसटी को छह और ओबीसी को 17 प्रतिशत आरक्षण मिल रहा है। राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग ने 21 मार्च, 2023 को ही अनुशंसा की थी कि ओबीसी के आरक्षण को 17 से बढ़ाकर 22 प्रतिशत करने में कोई कानूनी बाधा नहीं है, परंतु 14 अप्रैल, 2023 को पिछड़ा वर्ग कल्याण, बंगाल सरकार ने आयोग को अपने लिखित उत्तर में कहा कि राज्य सरकार ने कोई निर्णय नहीं लिया है। अब जब हाई कोर्ट ने ओबीसी प्रमाणपत्र रद करने का फैसला सुनाया है तो ममता ने कह दिया कि वे उक्त फैसले को नहीं मानेंगी और उसे सुप्रीम कोर्ट में चुनौती देंगी। यह बता रहा है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जो कह रहे हैं कि विपक्षी पार्टियां एससी, एसटी और ओबीसी के आरक्षण छीनकर मुस्लिमों को दे रही हैं, उनकी बातें हाई कोर्ट के इस फैसले से सही साबित हो रही है। अब देखना है कि सुप्रीम कोर्ट में जब यह मुद्दा जाता है तो क्या होता है।

मंथन

शेयर बाजार का स्वर्णिम काल

चार जून को लोकसभा चुनाव के परिणाम आएंगे। नरेन्द्र मोदी की सत्ता में तीसरी बार वापसी की संभावनाओं के बीच शेयर बाजार का स्वर्णिम काल आरंभ होने की उम्मीद जताई जा रही है

शशांक भारद्वाज
आर्थिक मामलों के जानकार

पिछले सप्ताह निफ्टी ने सर्वकालिक ऐतिहासिक ऊंचाई को स्पर्श किया तथा शुक्रवार के सत्र में 23 हजार के स्तर को पार किया। यद्यपि बंदी 22,957 की रही, फिर भी भारतीय शेयर मार्केट की यह तेजी भारत की जय का शक्तिशाली घोष था। इस बार की नई ऊंचाई अपने सामर्थ्य की ऊंचाई थी, अपनी शक्ति के बल पर प्राप्त की हुई ऊंचाई थी। इसलिए ये सबसे महत्वपूर्ण तेजी है। पहले भारतीय शेयर मार्केट विदेशी संकेत तथा नियंत्रण पर चलते थे। उन्होंने क्रय किया तो तेजी, बेचा तो मंदी। इस बार उनके विक्रय के पश्चात भी नई ऊंचाई बनी। यह संदेश है, आत्मनिर्भर शेयर मार्केट का।

ऐसा नहीं है कि विदेशी निवेशकों का प्रभाव बिलकुल समाप्त हो जाएगा, परंतु अब अपेक्षाकृत प्रभावी भूमिका में हम भारतीय निवेशक रहेंगे। अप्रैल में विदेशी संस्थागत निवेशकों ने 35,692 करोड़ रुपये के शेयर बेचे, मई में भी अब तक 34,459 करोड़ रुपये के शेयर की एफआइआइ की बिकवाली रही है, परंतु इस 70,151 करोड़ रुपये के विक्रय के पश्चात भी, इसे आत्मसात कर भारतीय शेयर मार्केट ने एक नई ऊंचाई बनाई। इस समय भारत एक शेयर क्रांति के मध्य में है। शेयरों में निवेश के प्रति भारतीयों का उत्साह तथा विश्वास बढ़ा है। यह भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए शुभ संकेत भी है, क्योंकि अच्छा शेयर मार्केट पूंजी मार्केट का विस्तार करता है, अधिक पूंजी उपलब्ध कराता है।

निफ्टी का 23 हजार का स्तर पर अपने उचित मूल्यांकन से थोड़ा अधिक ही है। परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि इस स्तर से कोई बड़ी गिरावट आने की आशंका है। लोकसभा चुनावों का परिणाम चार जून को आने वाला है। मोदी सरकार की सत्ता मे वापसी का भाव प्रबल है। अमेरिका के राजनीति विज्ञान के एक विशेषज्ञ इयान ब्राइमर ने भी भाजपा की विजय की भविष्यवाणी की है। अतः मोदी सरकार की वापसी होती है तो मार्केट उछलेंगे ही, अच्छे बहुमत से होगी तो बहुत जोर से उछलेंगे। वैसे इस सप्ताह मार्केट की चाल पुनः बता रही कि मार्केट की अवधारणा तो मोदी को बहुमत की ही है।

पिछले सप्ताह एफआइआइ ने नकद संभाग में 1166 करोड़ रुपये की खरीदारी की। निफ्टी की साप्ताहिक आधार पर 491 अंकों की उछाल में उनके द्वारा मात्र 1166 करोड़ रुपये की खरीद कोई बड़ा योगदान नहीं माना जा सकता है। एफआइआइ पुनः बड़े निवेश के पूर्व लोकसभा चुनाव का परिणाम देख लेना चाहते हैं। भारतीय शेयर मार्केट अब तेजी के लिए विदेशी निवेशक पर ही निर्भर नहीं रहने की स्थिति में पहुंच रहा है, अपनी आधारभूत आर्थिक कारकों के आधार पर चलेगा, तेज होगा।

भारतीयों की आय में इस वित्त वर्ष में अच्छी वृद्धि का अनुमान है। कुल घरेलू बचत में 11 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती है। यह अर्थव्यवस्था सुदृढ़ता के लिए अच्छा संकेत है। इस बचत का एक अच्छा भाग म्यूचुअल फंड, शेयरों में निवेशित हो सकता है। ऐसा एक चलन भी बना है। बीएसई में सूचीबद्ध कंपनियों का मार्केट पूंजीकरण पहली बार चार लाख करोड़ डालर के पार निकला है। मार्केट पूंजीकरण में उछाल से विदेशी निवेशक भी अंतर्निहित शक्ति से प्रभावित होते हैं, निवेश को आकर्षित होते हैं। 18 म्यूचुअल फंड ने पिछले एक वर्ष में 60 प्रतिशत से अधिक प्रतिफल दिया है। यह एमएफ निवेश के प्रति विश्वास दृढ़ करेगा, एमएफ में और भी अधिक धनराशि आएगी।

मोदी सरकार की वापसी से भारतीय शेयर बाजार को मिलेगी नई गति। प्रतीकात्मक

अवसरों की भरमार : देश में बिना बिके घरों की संख्या में कमी आ रही है। वारेन बफे जैसे शेयर के पितामह कह रहे कि भारत में अवसरों की भरमार है। विख्यात अर्थशास्त्री सुरजीत भल्ला कह रहे कि मोदी सरकार ने कीर्तिमान की संख्या में जीविका का सृजन किया है। पिछले एक दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था में आठ लाख करोड़ डालर का सार्वजनिक तथा निजी निवेश हुआ है। आरबीआइ ने 2.11 लाख करोड़ रुपये का लाभांश दिया है। यह सरकार की वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ करेगा। भारतीय बैंकों का लाभ तीन लाख करोड़ हो गया। बैंकों का अच्छा प्रदर्शन अच्छी आर्थिकी का द्योतक है।

भारत का विदेशी मुद्रा भंडार भी बढ़कर 648.7 अरब डालर पहुंच गया है। इस बीच कुछ आशंकाएं भी हैं। चीन ताइवान के तनाव के समाचार हैं। अमेरिका में ब्याज दरों में कमी मे विलंब की चर्चा है। चूंकि भारत में चुनाव परिणाम आने हैं, इसलिए इंडिया विक्स 21.71 है, परंतु आने के पश्चात यह भी गिर कर तेजी का समर्थन कर सकता है। चुनाव परिणामों के पूर्व तकनीकी आधार पर निफ्टी 23300 से 23500 जा सकता है। इसलिए अच्छे मूल्यांकन पर उपलब्ध शेयरों को इकट्ठा करें। मोदी की विजय के साथ भारत तथा भारतीय शेयर मार्केट का स्वर्णिम काल का आरंभ होने को है।

****

अमर उजाला

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

नई दिल्ली ■ मंगलवार, 28 मई 2024

आप जो भी हैं, उससे बेहतर बनने के लिए हमेशा प्रयास करते रहें।
-अब्राहम लिंकन

एक ओर पूरा देश भीषण गर्मी की चपेट में है, दूसरी तरफ चक्रवाती तूफान रेमल ने ओडिशा व पूर्वोत्तर राज्यों में बारिश से तबाही ला दी है। अब पर्यावरणविदों की इस चेतावनी को हमें गंभीरता से लेना ही चाहिए कि ग्लोबल वार्मिंग के कारण भविष्य में ऐसी और भी स्थितियों का सामना करना पड़ सकता है।

गर्मी में तूफान

बंगाल की खाड़ी में उठा भीषण चक्रवाती तूफान रेमल, रविवार रात पश्चिम बंगाल के सागर द्वीप और बांग्लादेश के खेपुपाड़ा के बीच तट से टकराने के बाद से ही कुछ कमजोर पड़ गया, लेकिन लैंडफॉल के साथ ही भारी बारिश से उत्तरी ओडिशा के कई जिलों व पूर्वोत्तर राज्यों में हुई तबाही का असर जिस तरह अब भी जारी है, वह वाकई बहुत गंभीर है। पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा दक्षिणी 24 परगना जिले खासकर सागरद्वीप, सुंदरबन और काकद्वीप से एक लाख से ज्यादा लोगों को सुरक्षित जगहों पर पहुंचाने से लोगों की जिंदगियां तो बचीं, लेकिन भयावह रेमल ने संपत्तियों को काफी नुकसान पहुंचाया है। जल-भराव से लोगों की मुश्किलें तो बढ़ी ही हैं, घरों, पेड़ों व बिजली के खंभों को जो नुकसान हुआ है, सो अलग। लैंडफॉल कितना खतरनाक था, इसका अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि पहले घंटे के दौरान कम से कम 356 बिजली के खंभे उखड़ चुके थे, जिसकी पुष्टि राज्य के बिजली मंत्री ने भी की है। राष्ट्रीय व राज्य आपदा मोचन बल (एनडीआरएफ व एसडीआरएफ) की कई टीमों के अलावा सेना, नौसेना व तटरक्षक बलों की भी टीमें प्रभावित क्षेत्रों से मलबा हटाने व दूसरे राहत कार्यों में लगी हैं, लेकिन लगातार बारिश से इनके कार्यों में बाधा पहुंच रही है। भीषण बारिश व तेज हवाओं की वजह से करीब 394 घरेलू व अंतरराष्ट्रीय उड़ानें व रेलमार्ग भी प्रभावित रहे। शुरुआत में यह आशंका व्यक्त की जा रही थी कि रेमल तूफान भी 2020 में आए सुपर चक्रवात अम्फन की तरह हो सकता है, लेकिन राहत की बात है कि इससे उतना नुकसान नहीं पहुंचा है। मानसून से पहले आने वाले तूफान से हमेशा यह आशंका रहती है कि यह नमी को खींचकर मानूसन को कमजोर कर सकता है, लेकिन विशेषज्ञों का यह कहना भी राहत भरा है कि इससे दक्षिण-पश्चिम मानसून पर कोई असर नहीं पड़ेगा। कहा जा रहा है कि मध्य बंगाल की खाड़ी में एक अस्थिर कम दबाव का क्षेत्र बन जाने से चक्रवात की स्थितियां पैदा हुईं। फिर भी,

भीषण गर्मी में चक्रवाती तूफान का आना चौंकाता है, क्योंकि इस तरह के तूफान अमूमन मानसून के बाद ही आते हैं। 2019 में आए फैनी तूफान को 1976 के बाद पहला ऐसा चक्रवाती तूफान बताया गया था, जिसने मानसून आने से पहले भीषण गर्मी में अपना रौद्र रूप दिखाया था। लेकिन उसके बाद जिस तरह से चक्रवाती तूफानों की आवृत्ति बढ़ी है, अभी छह महीने पहले मिचौंग तूफान भी आया था, अब हमें पर्यावरणविदों की इस चेतावनी को बेहद गंभीरता से लेना चाहिए कि ग्लोबल वार्मिंग के कारण भविष्य में इस तरह की स्थितियों का और भी सामना करना पड़ सकता है।

इस्राइल को कोसें नहीं, समझें

इस्राइल को कोसने वाले यह समझें कि वह बदल नहीं सकता, क्योंकि यह लड़ाई उसके अस्तित्व की है। लेकिन अंदरूनी और बाहरी चुनौतियों से जूझ रहा और खुद को इस्लामी क्रांति का अगुआ मानने वाला ईरान भूल रहा है कि लंबे समय में क्रांतियां उन्हीं मूल्यों को नुकसान पहुंचाने लगती हैं, जिनके लिए वे लड़ी गई थीं।

मेरे एक मित्र ने मुझे बताया कि पश्चिम एशिया का मौजूदा संकट दो तारीखों से संबंधित एक सवाल पर आधारित है कि 1948 और 1979 में से किस ऐतिहासिक क्षण के पलटने की संभावना है? ये तारीखें इस्राइल के निर्माण और उसके 31 साल बाद ईरानी क्रांति से संबंधित हैं। इस प्रश्न का निहितार्थ यह है कि यहूदी राज्य और इस्लामी गणतंत्र स्थायी रूप से एकसाथ अस्तित्व में नहीं रह सकते, कम से कम तब तक, जब तक दूसरा (इस्लामी गणतंत्र) पहले (यहूदी राज्य) को खत्म करने की चाह रखता हो। हाल के दिनों ने उनके पतन के दो संभावित माध्यमों को चर्चा में ला दिया है।

ब्रेट स्टीफेंस
द न्यूयॉर्क टाइम्स

सबसे पहले, अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय के अभियोजक करीम खान ने घोषणा की कि वह प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू और इस्राइल के रक्षा मंत्री योव गैलेंट के खिलाफ गिरफ्तारी वारंट के लिए आवेदन करेंगे। यह अलग बात है कि इस फैसले से दोषसिद्धि तो दूर की बात है, किसी की गिरफ्तारी भी संभव नहीं है। बाइडन प्रशासन ने पहले ही इस फैसले की निंदा की है और यहां तक कि जिन देशों के इस्राइल से कम दोस्ताना रिश्ते हैं, वे भी मानते हैं कि परमाणु हथियार संपन्न और ताकतवर खुफिया एजेंसी वाले किसी राष्ट्र के नेता की गिरफ्तारी संभव नहीं है। लेकिन यह घोषणा उसी व्यापक रणनीति का हिस्सा है, जिसके तहत इस्राइल के विरोधी मानते हैं कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता खत्म करने और अलग-थलग करने से धीरे-धीरे इस्राइल पतन की ओर अग्रसर होगा।

यहां तक कि नेतन्याहू और गैलेंट के साथ हमास के तीन नेताओं की गिरफ्तारी की मांग करने का करीम खान का फैसला भी उसी समग्र रणनीति का हिस्सा है, क्योंकि यह इस्राइली नेताओं को नैतिक स्तर पर आतंकवादियों के साथ रखता है। फिर हाल ही में ईरान के राष्ट्रपति इब्राहिम रईसी, विदेश मंत्री हुसैन अमीर अब्दुल्लाहियन और छह अन्य लोगों की मृत्यु भले ही दुर्घटनावश हुई हो। लेकिन इस आशंका से भी इन्कार नहीं

किया जा सकता कि जिस हेलिकॉप्टर में वे थे, उसे घरेलू या विदेशी साजिशकर्ता द्वारा गिराया गया। दुर्घटना का जो भी कारण हो, यह शासन के लिए विश्वासघात और पूर्वाभास को समझने में कमजोरी, दोनों को दर्शाता है। 'विश्वासघात' इसलिए कि सक्षम राष्ट्रों को अपने अति विशिष्ट व्यक्तियों को बिना दुर्घटना के विमान में ले जाने में सक्षम होना चाहिए। और 'पूर्वाभास में कमी' इसलिए कि 1980 के दशक में हजारों कैदियों को फांसी पर चढ़ाकर अपना दबदबा कायम करने वाले रईसी को व्यापक रूप से ईरान के 85 वर्षीय सर्वोच्च नेता अयातुल्ला अली खामेनेई के उत्तराधिकारी के रूप में देखा जाता था। ऐसे में, उनकी सुरक्षा को लेकर ज्यादा एहतियात बरतनी चाहिए थी।

अब ईरान को 50 दिनों के भीतर चुनाव कराने होंगे, जो शासन की गंभीर अलोकप्रियता को उजागर करेगा। वर्षों से मतदान का प्रतिशत घटता जा रहा है, क्योंकि खामेनेई चुनावी मैदान में सबसे कट्टर उम्मीदवारों को ही उतारते हैं। यह उनके उत्तराधिकार के लिए सत्ता संघर्ष का मंच भी तैयार करता है, खासकर खामेनेई के अलोकप्रिय बेटे मोज्तबा को उत्तराधिकार सौंपने के प्रति व्यापक अनिच्छा को देखते हुए शासन को उनकी इच्छा से प्रभावी ढंग से राजशाही में बदल दिया गया है।

अगर गंभीर आर्थिक संकट को 2022 के विरोध प्रदर्शन के क्रूर दमन से उपजे गुस्से के साथ जोड़ दें, तो गंभीर अस्थिरता की आशंका या शासन के अचानक पतन का खतरा वास्तविक महसूस होने लगता है। ऐसे में, यही सवाल उठता है कि इस्राइल या ईरान में से किस पर संकट ज्यादा है? जैसा कि पूर्व ईरानी राष्ट्रपति अकबर रफसंजानी ने एक बार कहा था, इस्राइल के लिए सबसे गंभीर खतरा यह है कि 'एक परमाणु बम समूचे इस्राइल को खत्म कर देगा। लेकिन इससे इस्लामी जगत को सिर्फ नुकसान ही होगा। इसलिए, इस पर विचार करना अतार्किक है।' ईरान की बढ़ती परमाणु क्षमताओं (और उस बारे में अस्पष्टताओं) को लेकर पश्चिमी दुनिया को जरूर चिंतित होना चाहिए। लेकिन आईसीसी के कदमों से या फिर शैक्षिक संस्थानों में विरोध जताने से इस्राइल को न के बराबर खतरा है। उनकी सोच यह है कि इस्राइली लोगों को एक खास क्षेत्र में बसाया नहीं गया था। यहूदियों का मानना है कि वे मूल रूप से इस्राइल से हैं।

यहूदीवाद इतिहास का सबसे पुराना उपनिवेशवाद-विरोधी संघर्ष है, जो रोमन युग में शुरू हुआ था। जहां तक इस्राइली यहूदियों के अपने पूर्वजों की भूमि पर लौट जाने की बात है, तो सवाल उठता है कि उनके पूर्वजों की भूमि कहां है और क्या है। रूसी नरसंहार या अरब नरसंहार या सामूहिक नरसंहार की भूमि? इस्राइल के कटु आलोचक इसे भूल जाते हैं, लेकिन इस्राइली नहीं। उनके पास जाने के लिए कोई जगह नहीं है, यह तथ्य अब यहूदी प्रवासी समुदायों के प्रति नफरतों से उजागर है। इस्राइल पर अपने दुश्मनों के समक्ष नरम पड़ने के लिए जितना दबाव डाला जाएगा, उतना ही यहूदीवाद पैदा होगा। यह कट्टरता यहूदी पहचान से जुड़ी हुई है। ईरान में शासन के लिए मुख्य खतरा भीतर से और नीचे से आता है। वहां की स्थितियों में यह भूलना आसान है कि 2022 में हिजाब और महिलाओं के अधिकारों को लेकर बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शनों से पहले भी कई विरोध प्रदर्शन हुए थे। हालांकि शासन बेहद हिंसक तरीकों के असंतुष्टि को दबाने में सफल रहा है, लेकिन इन विरोध प्रदर्शनों की बढ़ती आवृत्ति से स्पष्ट है कि शासन के प्रति जनता का गुस्सा बढ़ता जा रहा है।

रईसी की मौत के साथ शासन को जो समर्थन मिल भी रहा है, वह बंट सकता है। अर्थशास्त्र का एक अनौपचारिक नियम, जिसका नाम हर्बर्ट स्टेन के नाम पर रखा गया है, के अनुसार, जो प्रवृत्तियां जारी नहीं रह सकतीं, वे नहीं रहेंगी। यह नियम राजनीतिक अस्तित्व पर भी लागू हो सकता है। ईरान की तरह इस्राइल में भी घरेलू कमजोरियां हैं, जिनमें से कुछ ही सात अक्तूबर से पहले न्यायिक सुधार को लेकर चल रहे प्रदर्शनों के रूप में सामने आई थीं। लेकिन ईरान के शासकों के लिए जोखिम अधिक गंभीर हैं। उन्होंने हमेशा इस्लामी क्रांति का अगुआ होने का दावा किया है, लेकिन लगता है कि वे यह भूल गए हैं कि क्रांतियों द्वारा उन्हीं मूल्यों को नुकसान पहुंचाने का इतिहास रहा है, जिनके लिए वे लड़ी गईं। बड़े पैमाने पर ईरान के लोग इस्लामवादी नहीं रहना चाहते। लेकिन खुद का अस्तित्व बचाए रखने के लिए कट्टर बने रहना इस्राइल की मजबूरी है और वह इसके लिए लड़ेगा।

©The New York Times 2024

जीवन धारा

पाइथागोरस

जिस प्रकार संख्याओं को जोड़ा, घटाया, गुणा और विभाजित किया जा सकता है, उसी प्रकार आत्मा को भी परिष्कृत और शुद्ध किया जा सकता है। इसके सूत्र हैं-अनुशासन, आत्मनिरीक्षण और नैतिक सत्यता।

संख्याएं ईश्वर की भाषा के शब्द हैं

अराजकता के पीछे छिपी मधुर संगीत की धुनों का मिलन ही जीवन है। मेरे लिए इस संसार का अस्तित्व आत्मा की यात्रा है। हम केवल मांस और हड्डी भर नहीं हैं, बल्कि एक अस्थायी बर्तन के अंदर बंद ईश्वर की चिंगारी हैं। जीवन का उद्देश्य सिर्फ अस्तित्व तक सिमटे रहना नहीं, बल्कि उससे आगे जाना है। यानी शरीर की सीमाओं को त्यागकर उस पवित्रता तक पहुंचना है, जहां आत्मा अपने वास्तविक तत्व को याद करती है। हालांकि यह यात्रा कठिन जरूर है, लेकिन इससे घबराना नहीं है। इस यात्रा की शुरुआत हम संख्याओं की शक्ति से कर सकते हैं। ये जो संख्याएं हैं, वे अमूर्त न होकर ब्रह्मांड के छोटे-छोटे टुकड़े हैं। उनके अनुपात और रिश्तों में ब्रह्मांड का रहस्य छिपा है। इनमें ग्रहों की गति और संगीत के साथ ही हमारे अपने जीवन की लय छिपी है। दूसरे अर्थों में इसे ऐसे समझिए। जैसे एक संगीतकार कई धुनों को मिलाकर एक मधुर धुन बनाता है। ठीक इसी प्रकार ईश्वर, जिसे दिव्य वास्तुकार भी कहते हैं, वह अराजकता के बीच में से उपयोगी संख्याओं को मिलाकर एक व्यवस्था का निर्माण करता है।

एक वृत्त का सही अनुपात, संगीत अंतराल का सामंजस्य, ज्यामितीय आकृतियों की सुंदरता क्या है? ये सभी अंतर्निहित संख्यात्मक वास्तविकता के प्रमाण हैं। इन रिश्तों का अध्ययन करके, हम ईश्वरीय भाषा को समझना शुरू करते हैं, वह कोड जो पूरे अस्तित्व को नियंत्रित करता है। यही समझ हमें गहन सत्य की ओर ले जाती है। आत्मा क्या है? यह एक अमर इकाई है, जो जन्म-मरण के चक्र में फंसी हुई है। जिस प्रकार संख्याओं को जोड़ा, घटाया, गुणा और विभाजित किया जा सकता है, उसी प्रकार आत्मा को भी परिष्कृत और शुद्ध किया जा सकता है। इसके सूत्र हैं- अनुशासन, आत्मनिरीक्षण और नैतिक सत्यता के जीवन के माध्यम से, हम आत्मा की अशुद्धियों को साफ कर सकते हैं और उसे अंततः दिव्य स्रोत की ओर लौटने के लिए तैयार कर सकते हैं। हमें भौतिक संसार के प्रलोभनों का विरोध करना चाहिए। धन, शक्ति और क्षणभंगुर सुखों की अतृप्त भूख। ये सब आत्मा को भौतिक दायरे में बांधते हैं। इसके बजाय, हमें संयम और सादगी का जीवन अपनाना चाहिए, जिस प्रकार एक पूरी तरह से व्यवस्थित किया गया यंत्र शुद्धतम ध्वनि उत्पन्न करता है, उसी प्रकार दैवीय सिद्धांतों के अनुरूप जीवन जीने से शांति और तृप्ति की गहरी अनुभूति होती है। इस सामंजस्य का एक महत्वपूर्ण पहलू है पुनर्जन्म यानी आत्माओं का स्थानांतरण। आत्मा का एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने की प्रक्रिया कोई सजा नहीं है, बल्कि यह तो शुद्धीकरण की प्रक्रिया भर है। आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर नए में जाती है, यह शरीर मनुष्य या जानवर किसी का भी हो सकता है।

संख्याओं से मोक्ष

हमें युद्ध तो केवल पांच चीजों से करना आवश्यक है; शरीर की बीमारियों, मन की अज्ञानता, शरीर की कामवृत्ति, शहर के विद्रोहों और परिवारों के कलह से। इन्सान के रूप में मिला जीवन अज्ञानता के बंधनों से मुक्त होने और अस्तित्व के उच्च स्तर पर चढ़ने का अनमोल अवसर है। हम संख्या की शक्ति को अपनाकर अपने उस दिव्य स्वरूप में लौट सकते हैं, जहां से आए थे।

सूत्र

8 सवाल

ऐसी सूचनाएं जिनका आपके जीवन से सीधा संबंध होता है, उनके बारे में आपके मन में उठने वाले सभी सवालों का जवाब मिलेगा '8 सवाल' में...

अमेरिका के नेतृत्व में चीन को घेरने के लिए जापान, ऑस्ट्रेलिया और फिलीपीन ने मिलकर चार देशों का संगठन बनाया है, जिसे नाम दिया है स्क्वाड। आइए जानते हैं स्क्वाड का भारत की मौजूदगी वाले क्वाड पर क्या कोई असर होगा...

क्वाड के बाद स्क्वाड

क्या है स्क्वाड?

1 स्क्वाड चार देशों-अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया और फिलीपीन का एक रणनीतिक संगठन है, जिसकी पहल हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन की आक्रामकता पर अंकुश लगाने के लिए की गई है।

स्क्वाड का गठन कब हुआ?

2 इसी वर्ष अप्रैल में अमेरिका, जापान और फिलीपीन का त्रिपक्षीय शिखर सम्मेलन और दक्षिण चीन सागर में संयुक्त समुद्री गश्त के बाद इस नए बहुपक्षीय संगठन स्क्वाड का जन्म हुआ है। यह फिलीपिनो पॉलिसी सर्किल को समय पर बढ़ावा देता है।

क्यों पड़ी जरूरत?

3 दक्षिण चीन सागर में चीन और फिलीपीन के बीच तनाव व ताइवान को लेकर चिंता के बीच चीन के बढ़ते खतरे तथा हिंद प्रशांत क्षेत्र में उसकी महत्वाकांक्षा पर नियंत्रण के लिए इस क्षेत्रीय संगठन की जरूरत महसूस हुई। चीन से मुकाबले के लिए अमेरिकी रक्षा मंत्री लॉयड ऑस्टिन के नेतृत्व में पेंटागन अपनी क्षेत्रीय रक्षा रणनीति को मजबूत कर रहा है।

क्वाड बनाम स्क्वाड?

4 स्क्वाड एक क्षेत्र विशेष तक सीमित है, जबकि क्वाड का असर पूरे हिंद-प्रशांत महासागर पर बना रहेगा। स्क्वाड की तुलना में क्वाड को ज्यादा अहम माना जा रहा है। स्क्वाड से व्यापक क्षेत्रीय जिम्मेदारियों को संभालने की उम्मीद नहीं की जा सकती। उसकी प्राथमिक भूमिका संभवतः दक्षिण चीन सागर में स्थानीय उपस्थिति होगी।

कौन ज्यादा प्रभावी?

5 निस्संदेह क्वाड। भारत की सदस्यता वाले क्वाड संगठन की अहमियत ज्यादा है। बेशक फिलीपीन चीन का मुखर प्रतिरोध करता है, लेकिन उसकी सैन्य व आर्थिक क्षमता सीमित है।

क्वाड में भारत?

6 विदेशी मामलों के विशेषज्ञों के मुताबिक, भारत की भौगोलिक स्थिति, सैन्य क्षमताएं और जनसंख्या क्वाड साथियों के लिए इसे एक अमूल्य भागीदार बनाती है। भारत की क्वाड में सक्रिय उपस्थिति के साथ क्वाड की भूमिका अटल बनी हुई है।

क्वाड का भविष्य?

7 भारत की हालिया विदेश नीति उसके क्वाड साथियों की नीतिगत प्राथमिकताओं के अनुकूल नहीं है, लेकिन अब तक वाशिंगटन, कैनबरा या टोक्यो में से किसी ने क्वाड को कमतर करने की कोशिश नहीं की है। इसी वर्ष की दूसरी छमाही में भारत में क्वाड शिखर सम्मेलन आयोजित होगा, जब नई सरकार का गठन हो जाएगा।

स्क्वाड और भारत?

8 बेशक नए संगठन स्क्वाड में भारत शामिल नहीं है, लेकिन चीन को घेरने में जो भूमिका भारत निभा सकता है, वह फिलीपीन कभी नहीं कर सकता। भारत न सिर्फ दुनिया की सर्वाधिक आबादी वाला देश है, बल्कि पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था भी है। इसके अलावा भारत एक बड़ी सैन्य ताकत भी है।

आंकड़े

लीची उत्पादन

इन दिनों लीची का मौसम है। देश के इन पांच राज्यों में 75 फीसदी तक लीची का उत्पादन होता है।

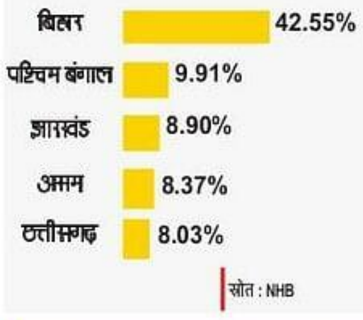

स्रोत : NHB

ज्येष्ठ माह के मंगलवार के दिन प्रभु श्रीराम और हनुमान का पहली बार मिलन हुआ था। इस माह के सभी मंगलवारों को बड़ा मंगल भी कहते हैं।

भक्त व भगवान के मिलन का दिन

शास्त्रों के अनुसार मान्यता है कि ज्येष्ठ माह के मंगलवार के दिन ही भगवान श्रीराम और उनके अनन्य भक्त हनुमान जी की पहली बार भेंट हुई थी। इस महीने में पड़ने वाले मंगलवार को बड़ा मंगल कहा जाता है।

एक अन्य कथा के अनुसार, कुंती पुत्र भीम बहुत पराक्रमी थे। इस कारण भीम को अपने बल और शक्ति पर काफी घमंड हो गया था। भीम के इस अभिमान को तोड़ने के लिए राम भक्त हनुमान ने बूढ़े वानर के रूप में भीम को सबक सिखाया था। उन्होंने अपने बुजुर्ग स्वरूप में भीम को परास्त कर दिया था। मान्यता है कि वह दिन ज्येष्ठ माह का मंगलवार था, इसलिए इसे बुढ़वा मंगल भी कहा जाता है। हनुमान जब पहली बार ब्राह्मण का रूप धरकर

अंतर्यात्रा

संकलित

प्रभु श्री राम से मिले, तो उन्होंने उनके वन आगमन के बारे में पूछा। इसके बाद दोनों ओर से संवाद हुआ और फिर हनुमान जी प्रभु राम को पहचान गए। इसका *रामचरित मानस* में बड़ा सुंदर वर्णन है :

'प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना। सो सुख उमा जाइ नहिं बरना॥ पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना॥' अर्थात-प्रभु को पहचानकर हनुमानजी उनके चरण पकड़कर पृथ्वी पर गिर पड़े (उन्होंने साष्टांग दंडवत प्रणाम किया)। शिवजी कहते हैं- हे पार्वती! वह सुख वर्णन नहीं किया जा सकता। शरीर पुलकित है, मुख से वचन नहीं निकलते। वे प्रभु के सुंदर वेश की रचना देख रहे हैं।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 07 अप्रैल, 1950

इटली में भारी असंतोष, वाम नेताओं की गंभीर चेतावनी

इटली में भारी असंतोष
वामपंथी नेताओं की गंभीर चेतावनी
विश्वशांति के नाम पर

इटली में अमेरिकी हथियारों के आयात का वहां की समाजवादी व कम्युनिस्ट पार्टियों ने डटकर विरोध किया है। दोनों पार्टियों के नेताओं ने सरकार को चेतावनी दी है कि वे अमेरिकी हथियारों का विरोध करेंगे।

सेहत पर भारी पड़ता 'वर्क फ्रॉम होम'

कोरोना के चलते पूरी तरह बदली हुई जिंदगी में 'वर्क फ्रॉम होम' इस कदर हावी हुआ कि दुनिया भर में लोग घर से ही काम करते नजर आ रहे हैं।

ऋतुपर्ण दवे

चिंता

मजबूरी से जरूरत बनता 'वर्क फ्रॉम होम' अब सिरदर्द बनता जा रहा है। हालांकि स्वास्थ्य जगत से जुड़े लोग इसे लेकर पहले से ही काफी आशंकित थे कि अपनी मनमर्जी से काम करने की आदत सेहत पर भारी पड़ेगी। वही अब हकीकत में दिखने लगी है। लोगों को अब इसका नुकसान समझ में आने लगा है। कोरोना के चलते पूरी तरह बदली हुई जिंदगी में कभी असंभव सा लगने वाला 'वर्क फ्रॉम होम' इस कदर हावी हुआ कि दुनिया भर में लोग घर से ही काम करने लगे।

जर्नल ऑफ एप्लाइड साइकोलॉजी में प्रकाशित उस अध्ययन ने तो दो बरस पहले ही इसको लेकर आगाह कर दिया था। तभी ऐसे शारीरिक और मानसिक दुष्परिणामों की दस्तक सामने आने लगी, जो वीडियो कॉन्फ्रेंस या ज्यादा वक्त ऑनलाइन रहने के चलते सेहत के लिए नुकसानदेह साबित हो रही थी। लेकिन जानते, समझते हुए भी बहुतेरे लोगों ने 'वर्क फ्रॉम होम'

की आड़ में घर में रहने और अपनी मनमर्जी के मुताबिक आरामदेह परिस्थितियों में काम करना जारी रखा। आराम के साथ काम करने की शैली ने शारीरिक दक्षता और फिटनेस को बुरी तरह प्रभावित किया। बिस्तर पर लेटे-लेटे, लैपटॉप पर काम निपटाना या घरेलू पोशाक में यहां-वहां बैठकर काम करने की आदत ने जहां दफ्तरों के अनुशासन को खत्म किया, वहीं रोज-रोज संगी-साथियों के साथ मुलाकात का अवसर भी छीन लिया। एक तरह से दफ्तर का रोजाना का गेट-टूगेदर भी खत्म हो गया। इस तरह 'वर्क फ्रॉम होम' के जरिये काम करने वाला वर्ग नितांत अकेला हो गया। माना कि कोरोना काल में यह मजबूरी थी, लेकिन प्रतिबंधों के हटने के बाद यह जरूरी क्यों बनी हुई है?

डाटा जर्नलिज्म वेबसाइट 'स्टैटिस्टा' के हालिया सर्वे ने और चिंताएं बढ़ा दी हैं। अमेरिका में लगभग छह हजार लोगों के बीच कराए गए सर्वे में पाया गया कि वर्क फ्रॉम होम यानी घर से काम करने वाले लोग ज्यादा संख्या में बीमार हुए। इसमें बताया गया है कि 59 प्रतिशत लोगों को कमर दर्द, सिरदर्द ने परेशान किया, तो 54 प्रतिशत लोग ऐसे मिले, जिन्हें किसी न किसी प्रकार के दर्द ने जकड़ लिया। वर्क फ्रॉम होम करने वालों का पाचन तंत्र भी बुरी तरह प्रभावित हुआ। जिन्हें पेट की कभी कोई गंभीर शिकायत नहीं थी, उन्हें पाचन की समस्याएं होने लगीं। ऐसे लोगों का आंकड़ा 40 प्रतिशत तक पहुंच गया।

दूसरी ओर, कार्यस्थल पर जाकर काम करने वालों में ये समस्याएं केवल 34 प्रतिशत निकलीं। हैरानी की बात यह रही कि घर के बंद कमरे में काम करने वाले 40 प्रतिशत लोग सर्दी-खांसी का शिकार हुए, वहीं दफ्तर के खुले माहौल में काम करने वालों का आंकड़ा केवल 34 प्रतिशत निकला। यह काफी चिंताजनक था कि घर बैठे लोग सर्दी-खांसी का ज्यादा शिकार हुए, जबकि ऑफिस वाले कम। मानसिक रूप से परेशान रहने वालों की संख्या भी चौंकाने वाली रही। घर से काम करने वाले 46 प्रतिशत लोगों को शिकायत थी कि घर से काम के दौरान उन्हें मानसिक समस्या से जूझना पड़ा, जबकि जो लोग अपने कार्य स्थल से काम करते थे, उनमें यह प्रतिशत केवल 36 रहा।

निश्चित रूप से कोरोना ने लोगों को बुरी तरह प्रभावित किया। लेकिन कोरोना के बाद जिनको 'वर्क फ्रॉम होम' से सहूलियत महसूस हो रही थी, उनका शरीर तरह-तरह की बीमारियों का घर बन गया। एक ही जगह बैठे-बैठे या लेटे-लेटे काम करने या सुबह उठते ही या फिर रात में देर तक काम करते रहने जैसी आदतों ने दफ्तर के अनुशासन को खत्म किया। कई बार लोग हफ्ते-दस दिन घरेलू काम में मशगूल रहते या खाली समय बिस्तर पर खरटि भरते। न कोई शारीरिक कसरत और न ही सूरज की किरणों से सामना। स्वाभाविक है बीमारियां तो घेरेंगी ही।

यकीनन, बेहद कम समय में वरदान से लगते 'वर्क फ्रॉम होम' को अभिशाप में बदलते देर नहीं लगी। अब भी कुछ ज्यादा बिगड़ा नहीं है। हमें शरीर के लिए जितने आराम की जरूरत है, उतना ही कसरत और पसीना बहाने की भी। बेहतर स्वास्थ्य के लिए दफ्तर और कमरे के बाहर की दुनिया की गतिविधियां, मेल, मुलाकात, घूमना, फिरना, टहलना और कार्य स्थल पर संगी-साथियों से वार्तालाप मानसिक और शारीरिक जरूरतों के लिए क्यों आवश्यक है, शायद यह अब सबको समझना जरूरी है।

edit@amarujala.com